नित्य वन्दना

स्वामी कृष्णानन्द

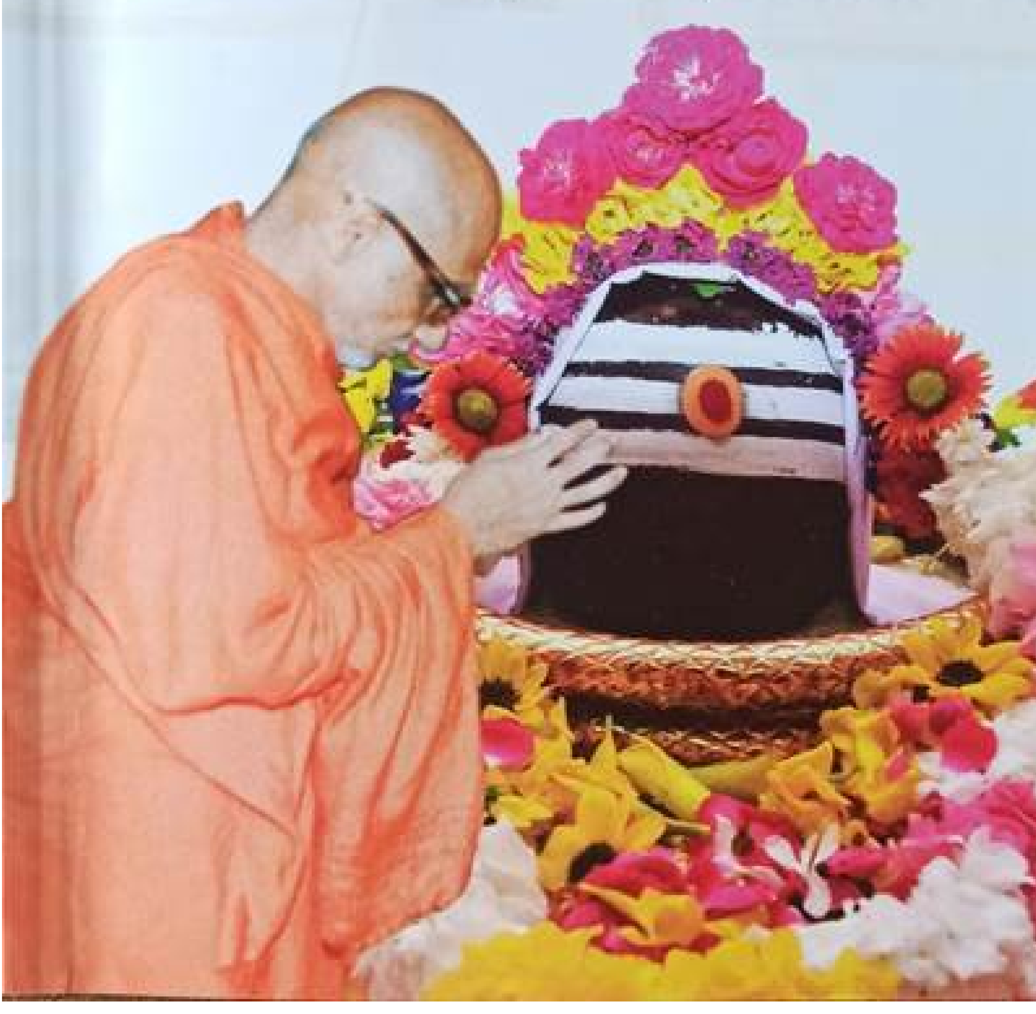

नित्य वन्दना

(परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की पुस्तक 'Daily Invocations' का हिन्दी अनुवाद)

अनुवादिका
स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी

प्रकाशक
द डिवाइन लाइफ सोसायटी
पत्रालय : शिवानन्दनगर-२४९ १९२
जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत
www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम हिन्दी संस्करण : २०२२

(१,००० प्रतियाँ)

© द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

HK 5

PRICE: 45/-

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा
'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस,
पो. शिवानन्दनगर-२४९ १९२, जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित।
For online orders and Catalogue visit: dlsbooks.org

**परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के
जन्म शताब्दी महोत्सव के पावन अवसर पर प्रकाशित**

प्रकाशकीय

प्रायः मन्दिरों में भगवान् के विग्रह का अभिषेक करते समय शतरुद्री, पुरुष सूक्त, नारायण सूक्त एवं श्री सूक्त का क्रमिक रूप में वाचन किया जाता है। ये वैदिक सूक्त सर्वशक्तिमान् प्रभु की 'भगवान् रुद्र-शिव' के रूप में, भगवान् नारायण की 'विराट् पुरुष' तथा भगवती लक्ष्मी की 'समृद्धि की अधिष्ठात्री देवी' के रूप में स्तुति एवं वन्दन स्वरूप हैं।

शतरुद्री, जो रुद्र-अध्याय नाम से भी जाना जाता है, यजुर्वेद का अंग है तथा यह भगवान् शिव अथवा रुद्र के रूप में सृष्टिकर्ता की ऐसी भव्य झाँकी प्रस्तुत करता है जहाँ सृष्टि के अणु-अणु में उनकी विस्मयकारी विद्यमानता को दर्शाया गया है। इसमें भगवान् एवं धर्म के विषय में सामान्य अवधारणाएँ, मानवीय विचार की सीमाओं को लाँधकर उस भव्य विविधता को उद्‌घाटित करती हैं जिसे भगवान् ने इस समस्त सृष्टि के रूप में सृजित किया है। भगवद्-भक्ति के इस व्यापक दृष्टिकोण में शतरुद्री, पुरुष सूक्त के समान ही है।

पुरुष सूक्त उन दिव्य पुरुष का स्तवन है, जिन्हें हम नारायण अथवा विराट् पुरुष कह सकते हैं। इस सूक्त में हमें ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति सम्बन्धी संकेत भी प्राप्त होता है कि भगवान् न केवल सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में प्रविष्ट हो कर उसे परिव्याप्त किये हुए हैं, अपितु वे स्वयं ही वह उपादान-सामग्री है जिससे यह सम्पूर्ण सृष्टि निर्मित हुई है। अतः जो कुछ भी भूतकाल में था, जो अभी है तथा जो भी भविष्य में होगा-उसे दिव्य माना गया है तथा परम-पुरुष के रूप में वन्दना की गयी है। 'सम्पूर्ण जीवन ही यज्ञ है', इस महान् भारतीय परम्परा का उद्गम-स्रोत यही वैदिक सूक्त है जहाँ भगवान् द्वारा सृष्टि के कार्य को, उनके द्वारा सम्पन्न प्रथम यज्ञ कहा गया है; इस यज्ञ में मानो भगवान स्वयं की आहुति देते हुए समस्त ब्रह्माण्ड के रूप में प्रकट होते हैं। इस प्रकार मनुष्यों द्वारा किये जाने वाले किसी भी प्रकार के यज्ञ अथवा सेवा कार्य में परिलक्षित आत्म-त्याग में, इस प्रथम दिव्य यज्ञ का उच्चतम भाव समाहित है।

यज्ञ अथवा आत्म-त्याग वह क्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य अन्य बन जाता है, अर्थात् वह स्वयं को अन्य में देखता है तथा उससे वही व्यवहार करता है जैसा वह स्वयं से करता है। यही धर्म का प्रारम्भ है-'तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्' । सृष्टि के यही प्रारम्भिक सिद्धान्त, इस जगत् के समस्त धर्म एवं सदाचार का मूल स्रोत बने।

पुरुष सूक्त में ही प्रथम बार समाज की चतुर्वर्णी व्यवस्था का उल्लेख प्राप्त होता है जहाँ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र क्रमशः समाज के आध्यात्मिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं श्रमजीवी पक्षों के प्रतीक माने गये हैं। इस छोटे-से सूक्त में हमें चिन्तन की ऐसी अद्भुत व्यापकता एवं सर्वसमावेशिता प्राप्त होती है जिसमें समस्त दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक मूल्यों के शक्तिशाली बीज निहित हैं।

नारायण सूक्त परम पुरुष का सृष्टि के जनक के रूप में वन्दन-आराधन है जो अचिन्तनीय, परात्पर तत्त्व होते हुए भी प्रत्येक प्राणी के हृदय में विराजमान हैं तथा उसके निकट से निकटतम हैं। यह ध्यान की लघु परन्तु सूक्ष्मतम विधि है जिसके माध्यम से जीवात्मा, परमात्मा के साथ एकरूप होने का प्रयास करती है।

श्री सूक्त भगवती महालक्ष्मी की, समस्त प्रकार की समृद्धि- भौतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक समृद्धि की अधिष्ठात्री देवी के रूप में स्तुति है। इसमें उन्हें धन-सम्पदा की 'देवी' सम्बोधित करते हुए स्त्रीवाचक शब्द प्रयुक्त हुआ है। यह मानवीय चिन्तन की इस परम्परा का पालन करते हुए किया गया है कि सृष्टि भगवान् की शक्ति, भगवान् की महिमा की द्योतक है अतः भगवान् की इस शक्ति एवं महिमा की पूजा-आराधना करने हेतु इसे भगवान् की पत्नी स्वरूप माना गया है। वस्तुतः भगवान् एवं उनकी शक्ति मनुष्यों द्वारा मूल्यांकन की सीमा से परे हैं, अतः वे स्त्री एवं पुरुष की अवधारणा से भी परे हैं।

पुस्तक 'नित्य वन्दना' में, इन दिव्य वैदिक सूक्तों का उनके मूल मन्त्रों सहित हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। हम आशा करते हैं कि यह पुस्तक भक्तजनों की दैनिक उपासना-प्रार्थना के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

शतरुद्री की महत्ता

यजुर्वेद का रुद्राध्याय अथवा शतरुद्री, भगवान् रुद्र-शिव नाम से अभिहित सर्वव्यापक-सर्वशक्तिमान् तत्त्व के प्रति एक अत्यन्ता भावपूर्ण स्तुति है। वह परम तत्त्व सृष्टि के पालनार्थ समस्त शुभ एक कल्याणकारी रूपों में विद्यमान है तथा उन विकराल रूपों में भी वही है जो वह सृष्टि के प्रलय एवं विनाश हेतु धारण करता है। अपने इन दो मुख्य पक्षों अर्थात् पालन एवं विनाश, रचनात्मक एवं विध्वंसात्मक, सकारात्मक एवं नकारात्मक के अतिरिक्त, वह परम तत्त्व हमारे दिन-प्रतिदिन के व्यावहारिक जीवन में भी परिपूर्ण रूप में विद्यमान है, उसकी इस विद्यमानता के पीछे एक गूढ़ रहस्य निहित है जिसे समझना अत्यन्त कठिन है।

सामान्यतः धार्मिक मनुष्य भगवान् को इस विश्व से परे, इस ब्रह्माण्ड से परे एक दिव्य सत्ता मानते हैं, इस महान् स्तुति 'शतरुद्री' का उद्देश्य भगवान् के विश्वातीत होने की अवधारणा को मिटाना है, तथा मनुष्य के हृदय में इस महानतम एवं गहनतम ज्ञान को स्थापित करना है कि भगवान् इस ब्रह्माण्ड से परे, ब्रह्माण्ड के सृष्टा मात्र नहीं हैं अपितु वे सृष्टि के अणु-अणु में, समय के प्रत्येक क्षण में, सदा-सर्वदा विद्यमान हैं।

इस अद्भुत स्तुति में भगवान् के एक अत्यधिक रोचक- रहस्यमय पक्ष को प्रस्तुत किया गया है कि भगवान् शुभ एवं अशुभ, सुन्दर एवं कुरूप, उचित एवं अनुचित, सकारात्मक एवं नकारात्मक, उच्च एवं निम्न, कल्पनीय एवं अकल्पनीय, नश्वर एवं अनश्वर, अस्तित्व एवं अनस्तित्व दोनों ही हैं; प्रत्येक अवधारणा तथा उसकी विपरीत अवधारणा, दोनों ही भगवान् के अस्तित्व में सम्मिलित हैं। श्वेत वर्ण का विपरीत श्याम वर्ण है, और भगवान् श्वेत एवं श्याम दोनों ही हैं। यदि हम कहते हैं कि अमुक वस्तु अच्छी है, तो उस वस्तु का भी होना आवश्यक है जिसे बुरी कहा जा सके। परन्तु भगवान् इन दोनों पक्षों का मिश्रित रूप लिये एक लोकातीत सत्ता हैं जो न अच्छी है, न बुरी है तथापि अच्छी एवं बुरी दोनों है; ज्ञाता एवं ज्ञेय दोनों है।

भगवदीय सत्ता में विपरीतात्मक तत्त्वों की इस विद्यमानता एवं सम्मिश्रण में मनुष्य का प्रत्येक प्रकार का विचार, अनुभव एवं संवेदना समाहित हैं।

जैसा कि हमें कभी-कभी कहा जाता है कि सम्पूर्ण जीवन एक युद्धक्षेत्र के अतिरिक्त कुछ नहीं है; यह महाभारत की वह युद्धभूमि है जहाँ परस्पर विरोधी शक्तियाँ निरन्तर संघर्षरत हैं क्योंकि ब्रह्माण्ड स्वयं को अस्तित्व के एक ही प्रकार की सतत विद्यमानता के माध्यम से प्रस्तुत नहीं करता है, अपितु यह विपरीत तत्त्वों के मिश्रण के रूप में स्वयं को प्रस्तुत करता है । हम इन्हें अभिकेन्द्रीय एवं अपकेन्द्रीय शक्तियाँ कह सकते हैं- अभिकेन्द्रीय शक्तियाँ वे हैं जो केन्द्र की ओर अभिमुख हैं तथा अपकेन्द्रीय शक्तियाँ वे हैं जो केन्द्र से पराङ्मुख होकर ब्रह्माण्ड की परिधि, अर्थात् इन्द्रिय पदार्थों की ओर गतिमान हैं। सर्वत्र विकास की प्रक्रिया में होने वाले, दो प्रवृत्तियों के संघर्ष का क्षेत्र ही जीवन का यह युद्धक्षेत्र है, जहाँ एक प्रवृत्ति ब्रह्माण्ड के केन्द्र की ओर अभिमुख है तथा उसकी विपरीत प्रवृत्ति केन्द्र से विमुख होकर ब्रह्माण्ड की परिधि की ओर गतिमान है।

इस प्रकार, जब भी हमारी दृष्टि, हमारा बोध एवं अवधारणाएँ, केन्द्राभिमुख प्रवृत्तियों के साथ समस्वरित हो जाती हैं, तो हम सर्वत्र भ शुभ, सुन्दर, सुखद एवं प्रिय वस्तुएँ देखते हैं; परन्तु जब हमारा बोध स एवं दृष्टिकोण, केन्द्र से विमुख होकर बाह्य-वस्तुओं की ओर जाने वाली प्रवृत्तियों में आबद्ध हो जाता है और हमारी चेतना बहिर्मुखी बन जाती है, तो वस्तुएँ हमें अशुभ, कुरूप, दुःखद एवं अप्रिय प्रतीत होने लगती हैं। अतः वस्तुओं में इस विसंगति का बोध ब्रह्माण्डीय संरचना में विसंगति के कारण नहीं होता है क्योंकि ब्रह्माण्ड में कहीं विसंगति नहीं है, विसंगति का यह बोध अस्तित्व की समग्रता को एक साथ ग्रहण करने की मानवीय अक्षमता के कारण होता है। मानवीय बोध के उपकरण 'मन' की यही दुर्बलता है कि यह वस्तुओं को केवल विभाजित करके ही जान सकता है।

रुद्राध्याय हमें मानव के इस व्यक्तिगत दृष्टिकोण एवं बोध से ऊपर उठाता है तथा हमें ब्रह्माण्ड की प्रत्येक छोटी-से-छोटी वस्तु में उस परम तत्त्व के दर्शन की प्रेरणा देता है चाहे वे वस्तुएँ प्रिय अथवा अप्रिय, शुभ अथवा अशुभ, आवश्यक अथवा अनावश्यक, सुखद अथवा दुःखद हों। केवल यहीं हम भयमिश्रित आश्चर्य के साथ पढ़ते हैं। कि भगवान् का चोर-डाकुओं के अधिपति के रूप में (तस्कराणां पतये नमः) तथा उस रूप में भी वन्दन-आराधन किया गया है

जो कल-कारखानों, गलियों, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश अर्थात् सृष्टि के समस्त वस्तु-पदार्थों में विद्यमान है।

रुद्र-अध्याय अथवा शतरुद्री, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का अथवा भगवान् के विराट् स्वरूप का, उस परम तत्त्व के रूप में ध्यान है जो सृष्टि के पूर्व एवं उसके पश्चात् भी विद्यमान रहता है तथा जिसमें समस्त सृष्टि उससे एकरूप होकर समाहित है। मनुष्य का मन यहाँ कार्य नहीं कर सकता है अर्थात् इस सत्य को समझ नहीं सकता है; क्योंकि एक ही समय पर समस्त वस्तुओं का, उनके प्रत्येक प्रकार एवं रूप में चिन्तन कर पाना मानव-मन के लिए सर्वथा असम्भव है। मानव-मन का स्वयं को शारीरिक एवं भौतिक सीमाओं से ऊपर उठाकर, ब्रह्माण्ड को द्रष्टा एवं दृश्य युक्त एक तत्त्व के रूप में परिकल्पित करने का यह प्रयास ही सर्वोच्च ध्यान है।

सामान्यतया मनुष्य को द्रष्टा, तथा ब्रह्माण्ड अथवा वस्तु-पदार्थों के जगत् को उससे बाह्य समझा जाता है। यहाँ परम तत्त्व के इस ध्यान में, भगवान् शिव अथवा रुद्र को समस्त सृष्टि में परिव्याप्त वैश्विक सत्ता के रूप में वर्णित किया गया है। जब चेतना के प्रयास से विचारक एवं विचार, चेतना एवं पदार्थ, व्यक्ति एवं वस्तु के मध्य भेद को नष्ट कर दिया जाता है, तब मानवीय चेतना उस परम तत्त्व के गहन ध्यान द्वारा उसमें लीन हो जाती है, उससे एकरूप हो जाती है जो परम तत्त्व न केवल ध्यान करने वाली चेतना है, अपितु जो ध्यान का विषय भी है।

एक प्रकार से यह स्तुति पुरुष सूक्त, विश्वकर्मा सूक्त, हिरण्यगर्भ सूक्त, अथर्ववेद के वरुण सूक्त तथा वेदों के इस प्रकार के अन्य सूक्तों के समान है क्योंकि ये सभी परम तत्त्व को न केवल दार्शनिक एवं आध्यात्मिक अपितु सामाजिक एवं नैतिक रूप से विपरीत तत्त्वों के सम्मिश्रण के रूप में चित्रित करते हैं ताकि वही व्यक्ति जो मानव-विचार की सीमाओं से ऊपर उठ चुका है, इस प्रकार की स्तुति-प्रार्थना कर सके। एक महामानव के अतिरिक्त अन्य कोई भगवान् की इस प्रकार स्तुति नहीं कर सकता है। मैं यह अनुभव करता हूँ कि यह एक सामान्य मनुष्य द्वारा की गयी भगवद्-स्तुति नहीं है अपितु एक महामानव का सर्वशक्तिमान् प्रभु के प्रति पूर्ण समर्पण है। यह स्तुति जीवन की समस्त कठिनाइयों एवं दुःखों के विरुद्ध एक महान् रक्षाकवच है।

इस रुद्र-अध्याय, इस शतरुद्री का नित्य वाचन एवं श्रवण किया जाना चाहिए तथा इसे अपनी दैनिक प्रार्थना का अंग बनाना चाहिए। इससे व्यक्ति के पापों का नाश होता है, उसके भीतर आध्यात्मिक प्रकाश दीप्त होता है तथा व्यक्ति अपने आन्तरिक मानसिक चक्षुओं से उस परम तत्त्व का, बाहर ब्रह्माण्ड के रूप में तथा भीतर मन एवं चेतना के रूप में दर्शन करता है। इस प्रकार यह एक वैश्विक ध्यान है, जो वेदों में 'एकमेव अद्वितीय परम पुरुष' की भगवान् शिव-रुद्र की स्तुति के रूप में वर्णित किया गया है। उन परम पुरुष का अनुग्रह हम सब पर हो।

पुरुष सूक्त की महिमा

वेदोक्त पुरुष सूक्त' महान् ऋषि नारायण द्वारा सृष्टि के विविध रूपों में अभिव्यक्त वैश्विक दिव्य सत्ता के दर्शन पर आधारित एक सर्वाधिक प्रभावशाली स्तुति मात्र ही नहीं है, अपितु यह एक सत्यान्वेषक को पराचेतना अर्थात् समाधि अवस्था में प्रवेश कराने का एक लघुमार्ग भी है। यह सूक्त पाँच प्रकार की शक्तियों से आपूरित है जो साधक को भगवदीय अनुभव प्रदान करने में सक्षम हैं। प्रथमतः, इस सूक्त के द्रष्टा महामुनीन्द्र नारायण हैं जिन्हें श्रीमद्भागवत में एकमात्र ऐसा पुरुष बताया गया है जिनके चित्त को इच्छाएँ विक्षुब्ध नहीं कर सकती हैं तथा महाभारत के अनुसार जिनकी असीम शक्ति की कल्पना समस्त देवता भी नहीं कर सकते हैं। इस प्रकार के यह महान् ऋषि हैं जिनके समक्ष यह सूक्त प्रकट हुआ तथा जिन्होंने इसे परम पुरुष की स्तुति के रूप में अभिव्यक्त किया। द्वितीयतः, सूक्त के मन्त्र एक विशिष्ट छन्द में आबद्ध किये गये हैं जो सूक्त-वाचन के समय विशेष आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न करने में अपना सहयोग देता है। तृतीयतः, मन्त्रोच्चारण की स्वर-प्रणाली (Intonation) मन्त्रों के निहितार्थ को अभिव्यक्त करने में सहायता देती है, इस स्वर-प्रणाली में थोड़ी सी त्रुटि एक भिन्न प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। चतुर्थतः, इस स्तुति में वन्दित देवता देश-काल में अभिव्यक्त कोई बाह्य सत्ता नहीं है, अपितु वह देश-काल से परे वैश्विक सत्ता है जो हमारे अनुभव का अविभाज्य अत्यावश्यक सारत्तत्त्व है। पंचमतः, यह सूक्त परम पुरुष की वैश्विक अवधारणा के अतिरिक्त, इस अनुभव की आन्तरिकता को भी सूचित करता है तथा इस प्रकार इसे किसी भी बाह्य वस्तु के बोध से पृथक करता है।

सूक्त इस कथन के साथ प्रारम्भ होता है कि सृष्टि में समस्त सिर, आँखें तथा पैर परम पुरुष के हैं। यहीं यह आश्चर्यजनक सत्य निहित है कि हम विभिन्न वस्तु-पदार्थ, शरीर, व्यक्ति, रूप-रंग इत्यादि नहीं देखते हैं अथवा विभिन्न ध्वनियाँ नहीं सुनते हैं, अपितु एकमेव अद्वितीय पुरुष के विभिन्न अंगों को ही देखते हैं। जिस प्रकार हम एक व्यक्ति के हाथ, पैर, नाक अथवा कान को उसके विभिन्न अंगों के रूप में देखते हुए भी ऐसा नहीं सोचते हैं कि हम विभिन्न वस्तुओं को देख रहे हैं,

अपितु हम यह सोचते हैं कि हमारे सम्मुख यह एक व्यक्ति है; उसके शरीर के विभिन्न अंगों के प्रति हम पृथक् पृथक् भाव नहीं रखते हैं; क्योंकि यहाँ हमारी चेतना उसके विभिन्न अंगों के होते हुए भी उसे एक सम्पूर्ण व्यक्ति के रूप में ग्रहण कर रही है। उसी प्रकार हमें इस सृष्टि को भी विभिन्न वस्तुओं एवं व्यक्तियों के मिश्रण के रूप में नहीं देखना है जिनके प्रति हमें विभिन्न दृष्टिकोण एवं व्यवहार रखना है, अपितु हम सृष्टि को एक वैश्विक पुरुष के रूप में देखना है जो हमारे समक्ष उज्ज्वल रूप से प्रकाशमान है तथा जो समस्त नेत्रों से हमें देखते हैं समस्त सिरों से सहमति व्यक्त करते हैं, समस्त होठों से मुस्कराते तथा समस्त जिह्वाओं से बोलते हैं। यह पुरुष सूक्त के परम पुरुष है ऋषि नारायण द्वारा इन सर्वेश्वर की महिमा का गान किया गया है। य किसी धर्म के भगवान् नहीं हैं तथा न ही अनेक देवताओं में से एक दे हैं। केवल यही भगवान् हैं जो सम्भवतया सर्वत्र-सर्वदा हो सकते हैं।

जब सृष्टि को इस प्रकार भगवद्रूप देखने हेतु हमारी विचार-प्रक्रिया का विस्तार किया जाता है तथा प्रशिक्षित किया जाता है, तब इसे गहरा आघात पहुँचता है; क्योंकि इस प्रकार विचार करने से हमारी समस्त इच्छाओं-कामनाओं का मूलोच्छेदन हो जाता है; जब सम्पूर्ण सृष्टि एक वैश्विक पुरुष ही है तो किसी भी इच्छा-कामना की सम्भावना कहाँ रह जाती है? मानव-मन का भ्रम तथा अज्ञान, जिसके कारण वह जगत् के भौतिक पदार्थों अथवा किसी मानसिक या सामाजिक स्थिति की इच्छा करता है, पुरुष सूक्त के इस अत्यन्त सरल परन्तु क्रान्तिकारी विचार द्वारा तत्काल नष्ट हो जाता है। हम अपने समक्ष एक सत् तत्त्व को ही देखते हैं, बहुरूपता अथवा विविधता को नहीं जिसकी इच्छा अथवा त्याग किया जाये।

परन्तु इससे भी अधिक गहरा आघात तब प्राप्त होता है जब एक बुद्धिमान्-विवेकवान् विचारक इसके वास्तविक अभिप्राय को समझता है कि वह स्वयं इन परम पुरुष का एक सिर अथवा अंग है। इस स्थिति में व्यक्ति को उसी प्रकार विचार करना होगा जिस प्रकार परम पुरुष विचार करते हैं क्योंकि अन्य प्रकार से विचार करना सम्भव नहीं है। यह एक ही समय पर समस्त व्यक्तियों एवं वस्तुओं के रूप में विचार करना होगा, वस्तुतः तब यह मानवीय विचार अथवा जीवन नहीं रह जायेगा। जिस प्रकार हम अपने मस्तिष्क की मात्र एक कोशिका से विचार नहीं करते हैं, अपितु अपने सम्पूर्ण मस्तिष्क द्वारा विचार करते हैं, उसी प्रकार एक विचारकर्ता, जो परम पुरुष के 'वैश्विक चिन्तन केन्द्र' का एक भाग है जिसका केन्द्र सर्वत्र है परन्तु परिधि कहीं नहीं है, वह एक जीव के रूप में अथवा

व्यक्तिगत काल्पनिक केन्द्र के रूप में विचार कर ही नहीं सकता है **न अन्य पन्था विद्यते** - अन्य मार्ग नहीं है। यह अतिमानसिक अर्थवा मनाती चिन्तन है। यह दिव्य ध्यान है। यह वही यज्ञ है जो सूक्तानुसार सृष्टि है प्रारम्भ में देवताओं ने सम्पन्न किया।

पुरुष सूक्त का अभिप्राय मात्र इतना नहीं है। एक साधक के लि यह इससे अधिक महत्त्वपूर्ण है। उपरोक्त वर्णन से हमें यह अनुचित धारणा नहीं बनानी चाहिए कि हम भगवान् को उसी प्रकार देख सकत हैं जिस प्रकार हम एक गाय को देखते हैं यद्यपि यह सत्य है कि सब कुछ वह परम पुरुष ही है। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि परम पुरुष 'दृष्टा' हैं, दृश्य नहीं। इसे सरलता से समझा जा सकता है कि जब सब कुछ परम पुरुष ही हैं अर्थात् दृष्टा ही है, तो दृश्य वस्तु कहाँ होगी? दृश्यमान् वस्तुएँ भी वास्तव में 'दृष्टा' पुरुष ही हैं। इस प्रकार यहाँ केवल 'दृष्टा' ही है जो बिना दृश्य वस्तु के स्वयं को ही देख रहा है।

यहाँ भी दृष्टा के स्वयं को देखने का अभिप्राय देश-काल में विद्यमान किसी वस्तु को देखने के समान नहीं समझा जाना चाहिए क्योंकि इसे हम फिर एक 'दृश्य वस्तु' के रूप में मान लेंगे। यहाँ दृष्टा नेत्रों के द्वारा स्वयं को नहीं देख रहा है अपितु वह अपनी चेतना में स्वय का अनुभव कर रहा है। यह एक वैश्विक सत्ता में समस्त वस्तु-पदार्थों का लीन हो जाना है। इस प्रकार की सर्वाधिक सरल अवधारणा के साथ, परम पुरुष का ध्यान करने से मनुष्य एक क्षण में भगवान् का साक्षात्कार कर लेता है।

नारायण सूक्त की महत्ता

नारायण सूक्त एक प्रकार से पुरुष सूक्त का ही रहस्यपूर्ण परिशिष्ट है; इन दोनों सूक्तीं में उल्लिखित उपास्य देव के स्वरूप में कुछ अन्तर मात्र है। पुरुष सूक्त परम पुरुष को 'सर्वव्यापक-एवं अवैयक्तिक सत्ता' के रूप में वर्णित करता है और नारायण सूक्त 'नारायण' नाम से उनका स्तवन करता है। इस प्रकार पुरुष सूक्त उन परम पुरुष की स्तुति है जो सृष्टि से परे हैं तथा साथ-ही-साथ सृष्टि के कण-कण में भी विद्यमान हैं, और नारायण सूक्त सृष्टि के रचयिता के प्रति हृदयस्पर्शी एवं भक्तिभावपूर्ण सम्बोधन एवं स्तुति है। नारायण सूक्त में पुरुष सूक्त के गूढ़ार्थ का कुछ स्पष्टीकरण भी प्राप्त होता है।

भगवान् नारायण सहस्र सिरों, सहस्र नेत्रों एवं सहस्र अंगों से युक्त हैं। वे सृष्टि से परे विद्यमान सृष्टिकर्ता मात्र नहीं हैं अपितु वे प्रत्येक प्राणी के हृदय में भी विराजमान हैं। गहन ध्यान में व्यक्ति अपने हृदय में 'अग्निशिखा' अर्थात् एक दीप्तिमन्त ज्योति के रूप में उनका दर्शन कर सकता है। मनुष्य के हृदय-कमल में ब्रह्माण्ड के रचयिता का दिव्य मन्दिर है। इस प्रकार परम पुरुष नारायण के उपासक को उनके दर्शन एवं वन्दन हेतु कहीं और जाने की आवश्यकता नहीं है, वह अपने हृदय में ही उनका दर्शन कर सकता है। भगवान् नारायण बाह्य जगत् की रचना करते हैं तथा वे ही भीतर से भाव-विचार को प्रेरित करते हैं। प्राणी की प्रत्येक नाड़ी में जीवन प्रवाहित एवं स्पन्दित होता है। यह प्रत्येक स्पन्दन, जीवन का यह प्रवाह भगवान् नारायण का ही चैतन्य स्वरूप है। इस सूक्त में भगवान् नारायण की उस एकमेव अद्वितीय अविनाशी स्वयम्भू सत्ता के रूप में स्तुति की गयी है जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र तथा समस्त देवताओं से परे है तथा जो स्वयं ही इन सबके रूप में प्रकट हुए हैं। **यच्च किंचित् जगत् सर्वम्** - इस जगत् में जं कुछ भी दिखायी देता है अथवा सुनायी देता है; भगवान् नारायण ह उन सबके भीतर एवं बाहर उन्हें परिपूर्ण रूप से आवृत्त किये हुए विराजमान हैं। भगवान् नारायण के आशीर्वाद एवं अनुग्रह हम सब पर हों।

श्री सूक्त की महिमा

श्री सूक्त का पाठ सुख-शान्ति, धन-धान्य एवं सर्वसमृद्धि की प्राप्ति हेतु देवी लक्ष्मी की विधिवत् पूजा सहित विशेषतया शुक्रवार को किया जाता है। भगवान् विष्णु अथवा नारायण की सहधर्मिणी देवी लक्ष्मी, भगवान् के दिव्य वैभव एवं महिमा की प्रतीक हैं। वस्तुतः भगवान् नारायण एवं देवी लक्ष्मी सत् तत्त्व (Being) एवं उसका क्रियात्मक स्वरूप (Becoming) हैं। सृष्टा, सृष्टि की विविधता में, वैभवपूर्ण रूप में स्वयं को ही प्रकट करता है।

प्रायः आध्यात्मिक साधक यह मानने की गलती करते हैं कि भगवान् जगत् से बाहर हैं तथा अतः आध्यात्मिक साधना हेतु जगत् को अस्वीकार करना चाहिए। यह उचित दृष्टिकोण नहीं है क्योंकि यह संसार तो भगवान् का वैभव है; जिस प्रकार प्रकाश सूर्य का वैभव है और उसे सूर्य से पृथक् नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार भगवद्-प्रेम के लिए इस विशाल सृष्टि के सौन्दर्य एवं वैभव को भगवान् से पृथक् नहीं किया जा सकता है।

नारायण, भगवान् हैं तथा देवी लक्ष्मी उनके ऐश्वर्य, वैभव एवं महिमा की प्रतीक हैं। वैष्णव सम्प्रदाय के अनुयायी ऐसा मानते हैं कि देवी लक्ष्मी के माध्यम से ही भगवान् नारायण की प्राप्ति हो सकती है। इसी प्रकार कुछ भक्त मानते हैं कि देवी राधा अथवा रुक्मिणी के माध्यम से ही भगवान् कृष्ण की प्राप्ति सम्भव है। इसका अभिप्राय यह है कि सापेक्ष तत्त्व के माध्यम से, परम निरपेक्ष तत्त्व तक पहुँचा जा सकता है; दृश्य-तत्त्व के माध्यम से ही, अदृश्य तत्त्व से सम्पर्क किया जा सकता है। दृश्यों-अनुभवों के इस जगत् में साधक, भक्त अथवा ध्यानकर्ता स्वयं भी सम्मिलित है। केवल एक अति-उत्साही भक्त यह कल्पना कर सकता है कि वह स्वयं इस जगत् से बाहर है तथा परिणामस्वरूप वह भौतिक जीवन के मूल्यों एवं महत्त्व को अस्वीकार कर देता है; ऐसा करते हुए वह यह भूल जाता है कि इस प्रकार की अस्वीकृति द्वारा उसने स्वयं को अस्वीकार कर दिया है क्योंकि वह भी इस भौतिक जगत् का, इस सृष्टि का ही एक भाग है। भगवान् को लोकातीत

परात्पर सत्ता मानते हुए भक्तिभाव अव्यावहारिक है, क्योंकि भगवान् केवल लोकातीत सत्ता नहीं, अपितु वे सृष्टि के कण-कण में व्याप्त सत्ता भी हैं।

शास्त्रों में वर्णित चार पुरुषार्थ 'धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष' अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक एक समग्र जीवन के सिद्धान्त को प्रस्तुत करते हैं ताकि हम केवल अपने शरीर, मन एवं आत्मा के स्तर पर ही नहीं अपितु बाह्य सृष्टि की प्रत्येक चर-अचर वस्तु के अनुरूप भी स्वयं को समायोजित कर सकें। श्री सूक्त में देवी लक्ष्मी की स्तुति वस्तुतः इस अवर्णनीय सृष्टि के रूप में अभिव्यक्त भगवान् के वैभव एवं शोभा के माध्यम से, स्वयं उन भगवान् की ही वन्दना है। देवी लक्ष्मी समृद्धि की प्रतीक हैं तथा जीवन की प्रत्येक प्रकार की सम्पदा, समृद्धि ही कही जाती है। सम्पदा से अभिप्राय केवल धन, सोना, चाँदी आदि नहीं है। समस्त प्रकार का सुख, विपुलता, प्राचुर्य तथा तृप्ति भी देवी लक्ष्मी का स्वरूप है। किसी भी प्रकार की भव्यता, महानता एवं श्रेष्ठता भी देवी लक्ष्मी के प्रतीक हैं। जब ये भगवान् के ही प्रतीक हैं, तो इन्हें अवांछनीय कौन कह सकता है? क्या भगवान् श्री कृष्ण ने स्वयं श्रीमद्भगवद्गीता में नहीं कहा है कि इस जगत् में जो भी अत्यन्त महिमायुक्त, ऐश्वर्ययुक्त, श्रेष्ठतम वस्तु है, वह उनकी ही दिव्य विभूति है? वास्तव में, जगत् में ऐसा कुछ नहीं है जो अस्वीकरणीय है। हमें यह भी जानना चाहिए कि ध्यान अथवा योग साधना, यथार्थ वस्तुओं को अस्वीकार करना नहीं अपितु समग्र अस्तित्व को स्वयं में समाहित करना है; यह हमारे एवं इस विशाल सृष्टि के मध्य एकत्व की स्थापना करना है। इससे सृष्टि का वैभव भगवद्-साक्षात्कार प्राप्ति के मार्ग में बाधा नहीं सिद्ध होता है अपितु यह भगवान् के सौन्दर्य, ऐश्वर्य एवं महिमा का सूचक बन जाता है। जिस प्रकार सूर्य की किरण हमें यह बताती है कि सूर्य क्या है, उसी प्रकार यह जगत्, हमें भगवान् के विषय में बताता है। प्रकृति एवं पुरुष दो पृथक् तत्त्व नहीं हैं। जगत् एवं ईश्वर अपृथक्करणीय हैं।

विष्णु पुराण के अनुसार भगवान् नारायण और देवी लक्ष्मी, अग्नि एवं उष्णता, पुष्प एवं सुगन्ध, तेल एवं स्निग्धता, जल एवं तरलता तथा सूर्य एवं प्रकाश के समान हैं। इन विभिन्न तुलनाओं के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि ये दोनों वास्तव में एक ही तत्त्व हैं; तथा ध्यान-उपासना हेतु ही इस एक तत्त्व को दो रूपों में परिकल्पित किया गया है। श्री सूक्त भगवान् के सृष्टि-वैभव की स्तुति, उनके ऐश्वर्य की स्तुति, उनकी सर्वोच्च सत्ता की स्तुति के रूप में, स्वयं उनकी ही स्तुति है। मनुष्य की धार्मिक भावनाओं की यह विशिष्ट प्रवृत्ति होती है कि ये जगत् को एक

'बुराई' मानती हैं तथा भगवान् को जगत् से परे अर्थात् एक लोकातीत लक्ष्य मानती हैं। यह प्रवृत्ति आध्यात्मिक पथ को अत्यधिक महत्त्व तथा जगत् को न्यूनतम महत्त्व देती है। हमें इसके विपरीत भी नहीं जाना है अर्थात् जगत् को अत्यधिक महत्त्व तथा लोकातीत तत्त्व को न्यूनतम महत्त्व देना भी उचित नहीं है। सत्य का पथ 'स्वर्णिम मध्यम' का पथ है। हम सब देवी लक्ष्मी के रूप में अभिव्यक्त, भगवान् के इस दिव्य वैभव के प्रति विनम्रतापूर्वक समर्पण करें तथा इसके माध्यम से शाश्वत प्राचुर्य, शाश्वत सम्पदा 'भगवान् नारायण' को प्राप्त करें।

विषय-सूची

प्रकाशकीय

शतरुद्री की महत्ता

पुरुष सूक्त की महिमा

नारायण सूक्त की महत्ता

श्री सूक्त की महिमा

अथ शतरुद्रियम्

अथ पुरुषसूक्तम्

अथ नारायणसूक्तम्

अथ श्रीसूक्तम्

अथ शतरुद्रियम्

ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतोत इषवे नमः ।
नमस्ते अस्तु धन्वने बाहुभ्यामुत ते नमः ।।

हे भगवान् रुद्र! आपको श्रद्धापूर्वक बारम्बार प्रणाम; (दुष्टों का संहार करने वाले) आपके क्रोध एवं आपके बाण को प्रणाम; आपके धनुष एवं आपकी शक्तिशाली भुजाओं को पुनः-पुनः नमन।

ध्यातव्य (Note) - सुविख्यात आचार्य सायण के अनुसार यजुर्वेद के रुद्राध्याय में वे मन्त्र संहिताबद्ध किये गये जिनके द्वारा ज्ञान-यज्ञ में आहुति अर्पित की जाती है; इस ज्ञान-यज्ञ में विविधतापूर्ण अखिल सृष्टि की, परम पुरुष के विराट्-व्यापक स्वरूप के रूप में अवधारणा की गयी है।

या त इषुः शिवतमा शिवं बभूव ते धनुः ।
शिवा शरव्या या तव तया नो रुद्र मृडय ।।

यह आपका बाण (भक्तों के प्रति) अत्यधिक शान्त-सौम्य हो गया है; आपका तूणीर (तरकश) एवं धनुष शुभ तथा मंगलप्रदायक हो गये हैं; हे परम पराक्रमी (रुद्र)! इनके द्वारा हमें प्रसन्नता प्रदान करिए।

ध्यातव्य (Note):

प्रथम मन्त्र में दुष्ट-संहार हेतु भगवान् के रौ स्वरूप का वन्दन किया गया है और दूसरे मन्त्र में शान्ति

की स्थापना के पश्चात्, अस्त्र-शस्त्र का उद्देश्य पूर्ण होने पर उनके शुभप्रदायक कल्याणकारी स्वरूप की स्तुति की गयी है।

या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी ।
तया नस्तनुवा शन्तमया गिरिशंताभिचाकशीहि ।।

हे कैलाश पर्वत से शान्ति की रश्मियों को विकीर्ण करने वाले भगवान् रुद्र! हमें अपने सकल-पापनाशक, शान्त एवं सौम्य स्वरूप में दर्शन दीजिए।

ध्यातव्य (Note) -

भगवान् रुद्र-शिव के दो स्वरूप हैं-रौद्र एवं सौम्य; ये भिन्न-भिन्न समय एवं परिस्थिति में प्रकट होते
हैं।

यामिषु गिरिशंत हस्ते बिभर्म्यस्तवे ।
शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिँसीः पुरुषं जगत् ।।

हे कैलाशनिवासी सर्वमंगलप्रदाता प्रभु! जिस बाण का आप शत्रुओं पर सन्धान करते हैं, हम भक्तों के लिए उसे कल्याणकारी बनाइए। हे पावन पर्वत पर वास करने वाले सर्वरक्षक! सृष्टि के किसी भी प्राणी को कोई कष्ट अथवा हानि न हो।

शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छावदामसि ।
यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्म सुमना असत् ।।

हे गिरीश ! हम आपकी प्राप्ति हेतु पावन-स्तुतियों द्वारा आपकी वन्दना-आराधना करते हैं। आप ऐसी कृपा कीजिए कि हमारा यह समस्त जगत् सभी प्रकार के रोगों एवं कष्टों से मुक्त हो तथा निर्मल एवं प्रसन्नमना प्राणियों से युक्त हो।

अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहीँश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्यः ।।

आदि देव, दिव्य चिकित्सक, भगवान् रुद्र मुझे जगत् के समस्त कष्टों यथा विषैले प्राणी, वन्य पशु, आसुरी शक्तियों से अभय प्रदान करके स्वयं के परात्पर स्वरूप में लीन करें।

असौ यस्ताम्रो अरुण उत बभ्रुः सुमङ्गलः ।
ये चेमा ॅ◌ा◌् रुद्रा अभितो दिक्षु श्रिताः
सहस्रशोऽवैषा हेड ईमहे ।।

सूर्य के रूप में भगवान् रुद्र (क्षितिज से उदय होने की विविध अवस्थाओं में) ताम्र वर्ण, अरुण वर्ण, बभ्रु वर्ण तथा अन्य विविध वर्णों से युक्त हैं, (अन्धकार-नाशक होने के कारण) सुमङ्गल स्वरूप हैं, वे समस्त दिशाओं को आवृत्त करती हुई सहस्रशः उज्ज्वल रश्मियों के रूप में प्रकटित हैं; हम श्रद्धापूर्वक प्रणिपात द्वारा इन रश्मियों की उग्रता को शमित करते हैं।

असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः ।
उतैनं गोपा अद्दशन्नद्दशन्नुदहार्यः ।।
उतैनं विश्वाभूतानि स द्दष्टो मृडयाति नः ।

जो (विषपान के कारण) नीलकण्ठ हैं, लोहितवर्णी (लाल रंग के) हैं, जो (सूर्य के रूप में) गगन में विचरण करते हैं, अशिक्षित गोप-बालक तथा जल ले जाती हुई ग्रामबालाएँ जिनका दर्शन करते हैं, जगत् के समस्त प्राणी (उच्च एवं निम्न कोटि दोनों) जिनका दर्शन करते हैं, वे भगवान् रुद्र हमें आनन्द प्रदान करें।

ध्यातव्य (Note) - इस मन्त्र का अभिप्राय यह है कि कैलाश पर्वत पर विराजमान प्रभु के दर्शन केवल

उन्हीं मनुष्यों को हो सकते हैं जिन्होंने उच्चतम आध्यात्मिक उपलब्धि प्राप्त की है, परन्तु सूर्य के रूप में उनके दर्शन प्रत्येक मनुष्य को सुलभ हैं। अपनी असीम करुणा के कारण, वे दयामय प्रभु स्वयं को हमारी इन्द्रियों के अनुभव का विषय बनाते हैं।

नमो अस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो ये अस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरन्नमः ।।

भगवान् रुद्र को बारम्बार प्रणाम जो नीलग्रीवा (नीलकण्ठ) हैं, जो (इन्द्र के रूप में) सहस्र नेत्रों वाले हैं तथा जल-वृष्टि करते हैं; उनके सेवक वृन्द को भी मेरा पुनः-पुनः नमन।

प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरार्लियोर्य्याम् ।
याश्चते हस्त इषवः परा ता भगवो वप ।।

हे भगवन्! आप अपने धनुष की प्रत्यञ्चा को खोल दीजिए कि तथा आपके हाथ में जो बाण हैं, उन्हें भी नीचे रख दीजिए है (क्योंकि अब शत्रु का नाश हो गया है)।

ध्यातव्य (Note) - संस्कृत भाषा में सर्वशक्तिमान् प्रभु के लिए 'भगवान्' शब्द का प्रयोग किया जाता है। 'भगवान्' शब्द का अर्थ है जो समस्त ऐश्वर्य, वीर्य, यश, श्री, ज्ञान एवं वैराग्य से सम्पन्न हैं।

अवतत्य धनुस्त्व सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव ।।

हे सहस्राक्ष एवं (युद्ध-काल में) शत-तूणीर-धारी भगवन्! (आपके उद्देश्य की पूर्ति हो जाने के पश्चात्) अपने धनुष को नीचे रखकर तथा अपने तीक्ष्ण बाणों के अग्रभाग को तोड़कर, हमारे प्रति सौम्य एवं मंगलप्रदायक स्वरूप धारण करिए।

विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवा उत ।
अनेशन्नस्येषव आभुरस्य निषङ्गथिः ।।

भगवान् कपर्दिन् (शिव) का धनुष प्रत्यञ्चा से मुक्त हो; उनका तूणीर तीक्ष्ण बाणों के अग्रभाग से रहित हो; उनके बाण भेदने में (आहत करने में) असमर्थ हों तथा उनका धनुष बाणों के सन्धान का माध्यम नहीं अपितु केवल उन बाणों का आश्रय बने।

ध्यातव्य (Note): यह मन्त्र तथा अन्य मन्त्र, जिनमें भगवान् रुद्र से उनके अस्त्र-शस्त्र नीचे रखने की प्रार्थना

की गयी है, उनके सौम्य स्वरूप का आह्वान करते हैं। जब भगवान् रुद्र अपने भयंकर अस्त्र-शस्त्रों द्वारा संहार-कार्य में संलग्न नहीं होते हैं, उस समय उनका सौम्य स्वरूप प्रकट होता है।

या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ।
तयाऽस्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिब्भुज ।।

हे समस्त समृद्धि के विपुल स्रोत ! अपने हाथ में धारण किये हुए इस धनुष एवं अन्य अस्त्रों (खड्ग आदि) से हमारी सब ओर से रक्षा करिए; क्योंकि अब आपके इन अस्त्र-शस्त्र द्वारा संहार-कार्य पूर्ण हो चुका है।

नमस्ते अस्त्वायुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने ।।

हे प्रभु! आपके उस बाण को प्रणाम जिसका धनुष पर सन्धान नहीं किया गया है परन्तु जो शत्रु के विनाश में समर्थ है। आपके धनुष और आपकी भुजाओं को पुनः-पुनः प्रणाम।

परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः।
अथो य इषुधिस्तवारे अस्मन्निधेहि तम् ।।

हे प्रभु! आपके धनुष से सन्धान किये गये तीक्ष्ण बाण हमारा त्याग करें अर्थात् हमें न मारें तथा आपके तूणीर को भी आप हमसे दूर रखिए (और हमारी रक्षा करिए)।

ध्यातव्य (Note) - एक अन्य व्याख्या के अनुसार इस मन्त्र की दूसरी पंक्ति का यह अभिप्राय है,

"आपके इस तूणीर का हमारे शत्रुओं के नाश हेतु प्रयोग करिए।"

ॐ नमस्ते अस्तु भगवन्
विश्वेश्वराय महादेवाय
त्र्यम्बकाय त्रिपुरान्तकाय
त्रिकालाग्निकालाय कालाग्निरुद्राय
नीलकण्ठाय मृत्युंजयाय
सर्वेश्वराय शंकराय
सदाशिवाय श्रीमन्महादेवाय नमः ।।

हे विश्वेश्वर, महादेव, त्रिनेत्रधारी, त्रिपुरसंहारक, त्रिलोक की संहारकारक अग्नि के लिए मृत्यु-स्वरूप, काल-रूपी अग्नि के लिए अत्यन्त भयप्रद, नीलकण्ठ, मृत्युञ्जय, सर्वेश्वर, सर्वशुभप्रदायक, सदाशिव प्रभु आपको पुनः-पुनः प्रणाम।

नमो हिरण्यबाहवे सेनान्ये दिशां च पतये नमो
नमो वृक्ष्येभ्यो हरिकेशेभ्यः पशूनां पतये नमो
नमः सस्पिञ्जराय त्विषीमते पथीनां पतये नमः ।।

हिरण्यबाहु (स्वर्णवर्णी भुजाओं वाले), समस्त सेनाओं के महानायक, समस्त दिशाओं के स्वामी भगवान् रुद्र को प्रणाम। सृष्टि के समस्त प्राणियों के पालनकर्ता, हरित वृक्षों के स्रोत एवं सारतत्त्व आपको पुनः-पुनः प्रणाम। स्वयं प्रकाशमान एवं (इस जगत् से प्रयाण करने के विभिन्न पथ) विविध पथों के स्वामी आपको बारम्बार नमन।

ध्यातव्य (Note) - रुद्र-अध्याय के प्रथम भाग में भगवान् रुद्र-शिव के बाण एवं धनुष धारण करने वाले रूप की शक्ति का वर्णन किया गया है। इसके उत्तरवर्ती भागों में सृष्टि के अणु-अणु में प्रकटित उनके दिव्य वैभव का चित्रण किया गया है। इन स्तुति-मन्त्रों में समस्त वस्तु-पदार्थों में विद्यमान परम पुरुष को श्रद्धापूर्वक बारम्बार वन्दन-नमन किया गया है। इसलिए इनमें प्रत्येक पंक्ति में 'नमः' शब्द की पुनरावृत्ति

हुई है; पंक्ति के प्रारम्भ एवं अन्त दोनों स्थानों में 'नमः' का प्रयोग हुआ है। (अंग्रेजी अनुवाद में यह पुनरावृत्ति नहीं की गयी है)

नमो बभ्लुशाय विव्याधिनेऽन्नानां पतये नमो
नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानां पतये नमो
नमो भवस्य हेत्यै जगतां पतये नमः ।।

वृषभारूढ़, शत्रुओं का दमन करने वाले तथा अन्न अथवा पदार्थ के स्वामी भगवान् रुद्र को प्रणाम। नील-वर्ण केश से युक्त, मंगलकारी-यज्ञोपवीत-धारी, सद्गुणसम्पन्न मनुष्यों के स्वामी आपको नमन। भवपाश के नाशक एवं समस्त सृष्टि के अधिपति आपको बारम्बार प्रणाम।

नमो रुद्रायाततताविने क्षेत्राणां पतये नमो
नमः सूतायाहन्त्याय वनानां पतये नमो
नमः रोहिताय स्थपतये वृक्षाणां पतये नमः ।।

अपने धनुष द्वारा रक्षा करने हेतु उद्यत, समस्त क्षेत्रों (मन्दिरों, शरीरों एवं सम्पूर्ण सृष्टि) के स्वामी भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः प्रणाम । अजेय एवं सारथि-रूप रुद्र (समस्त जगत् के दिशा-निर्देशक) आपको नमन; वनस्पति-जगत् के पालक आपको नमन। लोहितवर्णी, वृक्षों में विराजमान, सर्वसंरक्षक आपको पुनः-पुनः प्रणाम।

नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणां पतये नमो
नमो भुवंतये वारिवस्कृतायौषधीनां पतये नमो
नम उच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनां पतये नमो
नमः कृत्स्नवीताय धावते सत्त्वनां पतये नमः ।।

राजदरबार में स्वयं को मन्त्री के रूप में, व्यापार में वणिक् के रूप tilde 7 अभिव्यक्त करने वाले तथा वनों में लता-वृक्ष आदि के परिपालक भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः प्रणाम । सृष्टिकर्ता, समस्त सम्पदा के स्वामी, औषधियों के अधिपति आपको नमन। युद्ध में उग्र-शब्द द्वारा शत्रुओं को भयभीत करने वाले, समस्त

सेनाओं के सेनानायक, सम्पूर्ण सृष्टि को परिव्याप्त करने वाले, स्फूर्तिमान कर्ता तथा शरणापन्न भक्तजनों के आश्रय आपको बारम्बार नमन।

नमः सहमानाय निव्याधिन आव्याधिनीनां पतये नमो
नमः ककुभाय निषङ्गिणे स्तेनानां पतये नमः ।।

शत्रुओं का पराक्रमपूर्वक सामना करने वाले, शत्रु-सेना के प्रबल संहारक तथा सब ओर से प्रहार करने वाली सेना (धर्म के प्रति निष्ठावान् सेना) के रक्षक भगवान् रुद्र को प्रणाम; वृषभ पर आरूढ़, खड्गधारी, चोरों (प्रत्येक प्राणी का हृदय हरण करने वाले) के अधिपति आपको पुनः-पुनः नमन।

ध्यातव्य (Note): 'स्तेनानां पतये' अर्थात् चोरों के अधिपति शब्द परम पुरुष की सृष्टि के अणु-अणु में
विद्यमानता को इंगित करता है।

नमो निषङ्गिण इषुधिमते तस्कराणां पतये नमो
नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमो
नमो निचेरवे परिचरायारण्यानां पतये नमः ।।

बाण एवं तूणीरधारी भगवान् रुद्र को प्रणाम; तस्करों के स्वामी आपको प्रणाम; छल-छद्म-युक्त आपको प्रणाम; डाकुओं के स्वामी आपको प्रणाम तथा वनों, वीथियों एवं गृहों में छिपे चोरों के चतुर स्वामी आपको पुनः-पुनः प्रणाम।

ध्यातव्य (Note)- भगवान् की 'चोरों के अधिपति' के रूप में वन्दना करने के दो अभिप्राय हैं। प्रथमतः,
भगवान् ही चोरों की भी अन्तर्वासी सत्ता हैं, उनकी सत्ता के बिना चोर-डाकुओं का जीवन असम्भव है। द्वितीयतः, ईश्वर होने के साथ-साथ, चोर के रूप में वे 'जीवात्मा' भी हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को भगवद्-स्वरूप मानते हुए देखा जाये तो भगवान् स्वयं ही उच्च-नीच, अच्छे-बुरे, पुण्यशील एवं पापशील व्यक्ति के रूप में लीला कर रहे हैं; परन्तु वैयक्तिकता की धारणा में आबद्ध, एक जीवात्मा के लिए यह समझना कठिन होता है। परम सत्य में

प्रतिष्ठित ज्ञानीजनों का ही ऐसा दृष्टिकोण होता है। उस परम सत्ता में समस्त नैतिक अवधारणाएँ रूपान्तरित हो जाती हैं। ये वैदिक-मन्त्र एक साधक को सम्पूर्ण सृष्टि में भगवद्-दर्शन करने में सहायता प्रदान करते हैं।

नमः सृकाविभ्यो जिघा सद्भ्यो मुष्णतां पतये नमो
नमोऽसिमद्भ्यो नक्तंचरद्भ्यः प्रकृन्तानां पतये नमो
नम उष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानां पतये नमः।।

स्व-रक्षा में संलग्न पशुओं के स्वामी तथा मनुष्यों की हत्या करने को उद्यत चोरों के स्वामी भगवान् रुद्र को प्रणाम; प्राणियों पर घात कर उनके धन को चुराने हेतु रात्रि में विचरण करने वाले खड्गधारी डाकुओं के प्रधान आपको प्रणाम; सिर पर पगड़ी धारण कर पर्वतों में विचरण करने वाले तथा दूसरों के गृह, क्षेत्र आदि से उनकी वस्तुओं का छलपूर्वक हरण करने वालों के पालक आपको पुनः-पुनः प्रणाम।

नम इषुमद्भ्यो धन्वाविभ्यश्च वो नमो
नम आतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो
नम आयच्छद्भ्यो विसृजभ्यश्च वो नमो
नमोऽस्यद्भ्यो विद्धयद्भयश्च वो नमः ।।

भगवान् रुद्र को बारम्बार नमन जो बाण एवं धनुष धारण करने वालों के रूप में विचरण करते हैं; जो धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाने वाले मनुष्यों में विराजमान हैं; जो धनुष को भली-भाँति खींचकर बाण चलाने वालों में विराजमान हैं तथा जो बाण को सम्यक् रूप में चलाकर लक्ष्य-बेध करने वाले व्यक्तियों में विराजमान हैं।

ध्यातव्य (Note) - महान् आचार्य सायण यहाँ एक संकेत देते हैं कि ये समस्त रूप भगवान् रुद्र के ही हैं;

इससे यह आश्चर्यजनक सत्य उद्घाटित होता है कि भगवान् केवल समस्त नाम-रूपों में विराजमान ही नहीं हैं, अपितु इस जगत् में जो कुछ है, वह सब स्वयं भगवान् ही हैं।

नम आसीनेभ्यश्शयानेभ्यश्च वो नमो
नमः स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्च वो नमो
नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमो
नमः सभाभ्यः सभापतिभ्यश्च वो नमो
नमो अश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमः ।।

बैठे हुए एवं विश्राम करते हुए भगवान् रुद्र को प्रणाम; स्वप्नावस्था एवं जाग्रतावस्था का अनुभव करने वाले आपको प्रणाम; स्थित रहने वाले एवं वेगवान् गति वाले आपको प्रणाम; सभा-रूप एवं सभापति-रूप आपको प्रणाम; अश्व-रूप एवं अश्वपति-रूप भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः प्रणाम।

नम आव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो
नम उगणाभ्यस्तृ हतीभ्यश्च वो नमो
नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो
नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमः ।।

सब प्रकार से प्रहार करने वाली शक्तियों के रूप में विराजमान भगवान् रुद्र को नमन; सौम्य उच्च शक्तियों तथा उग्र निम्न शक्तियों के रूप में विराजमान आपको नमन; इन्द्रिय सुखों के लिए लालायित मनुष्यों तथा उनके अधिपतियों के रूप में विराजमान आपको नमन; समस्त (चर-अचर) प्राणीसमूह एवं उनके अधिपति स्वरूप आपको पुनः-पुनः नमन।

ध्यातव्य (Note) - मूल मन्त्र में 'शक्ति' शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है, परन्तु मन्त्र में प्रयुक्त स्त्रीवाचक शब्दों की महत्ता स्पष्ट करने हेतु अंग्रेजी अनुवाद में 'शक्ति' शब्द का प्रयोग किया गया है। ये भगवान् की विभिन्न शक्तियों को इंगित करती हैं। आचार्य सायण कहते हैं कि सौम्य शक्तियाँ सप्तमातृकाएँ है तथा उग्र शक्तियाँ दुर्गादेवी आदि हैं।

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो
विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमो
नमो महद्भ्यः क्षुल्लकेभ्यश्च वो नमो
नमो रथिभ्योऽरथेभ्यश्च वो नमो
नमो रथेभ्यो रथपतिभ्यश्च वो नमः ।।

देवगण रूप एवं देवागणाधिपति रूप भगवान् रुद्र को प्रणाम, रूपरहित एवं विश्वरूप आपको प्रणाम; उत्कृष्ट प्राणी रूप एवं क्षुद्र प्राणी रूप आपको प्रणाम; रथी रूप (रथ पर आरूढ़) एव रथविहीन रूप आपको प्रणाम; रथ रूप एवं रथपति रूप आपको बारम्बार प्रणाम।

नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो
नमः क्षत्तृभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो
नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो
नमः कुलालेभ्यः कमरिभ्यश्च वो नमो
नमः पुञ्जिष्टेभ्यो निषादेभ्यश्च वो नमः ।।

सेना रूप एवं सेनापति रूप भगवान् रुद्र को नमन; कुशल सारथि रूप एवं रथचालन के नव-शिक्षार्थी रूप आपको नमन, काष्ठकर्मी रूप एवं स्थनिर्माता रूप आपको नमन; कुम्भकार रूप एवं लौहकार रूप आपको नमन; पक्षी-आखेटक (बहेलिया) एवं निषाद (मछुआरा) रूप आपको पुनः-पुनः नमन।

नम इषुकृद्भ्यो धन्वकृद्भ्यश्च वो नमो
नमो मृगयुभ्यः श्वनिभ्यश्च वो नमो
नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमः ।।

बाण एवं धनुष निर्माता रूप भगवान् रुद्र को प्रणाम; आखेटक एवं व्याध रूप आपको प्रणाम; श्वान रूप एवं श्वानों के स्वामी रूप आपको प्रणाम।

नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च
पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च
नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय
च शतधन्वने च ।।

सृष्टिकर्ता एवं संहारकर्ता भगवान् रुद्र को नमन; पापनाशक एवं सर्वप्राणीरक्षक आपको नमन; नीलकण्ठ एवं शुभ्रकण्ठ आपको नमन; जटाधारी एवं मुण्डित केश आपको नमन; सहस्र नेत्र युक्त एवं शत-धनुष-धारी आपको पुनः-पुनः नमन।

ध्यातव्य (Note): आचार्य सायण कहते हैं, "एक तपस्वी के रूप में भगवान् शिव जटाधारी हैं; एक संन्यासी के रूप में वे मुण्डितकेश हैं; इन्द्र के रूप में वे सहस्र-नेत्र युक्त हैं तथ अपने विविध रूपों में वे असंख्य धनुष धारण करते हैं।"

नमो गिरिशाय च शिपिविष्टाय च नमो मीदुष्टमाय
चेषुमते च नमो हस्वाय च वामनाय च नमो बृहते
च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च संवृध्वने च ।।

कैलाशपर्वतवासी (शिवरूप) भगवान् रुद्र को प्रणाम, समस्त प्राणियों के अन्तर्वासी (विष्णुरूप) आपको नमन; बाण धारण करने वाले तथा मेघों द्वारा अतिवृष्टि कराने वाले आपको नमन; ह्स्व अंगों वाले वामनरूप आपको नमन; विविधाका अंगों युक्त वृहत्काय आपको नमन; अनन्त काल से वन्दित पुरातल पुरुष आपको बारम्बार प्रणाम।

नमो अग्रियाय च प्रथमाय च नम आशवे
चाजिराय च नमः शीघ्रियाय च शीभ्याय च
नम ऊर्त्याय चावस्वन्याय च नमः स्रोतस्याय च
द्वीप्याय च।

आदिभूत रूप एवं समस्त प्राणियों के स्वामी भगवान् रुद्र क प्रणाम; सर्वव्यापक एवं सर्वाधिक स्फूर्तिमान आपको प्रणाम गतिशील एवं प्रवाहशील वस्तुओं में विद्यमान आपको प्रणाम वेगवान् जलतरंगों एवं स्थिर जल में विद्यमान आपको प्रणाम नदियों एवं द्वीपों में व्याप्त आपको प्रणाम।

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय
चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च
नमो जघन्याय च बुध्नियाय च नमः
सोभ्याय च प्रतिसर्याय च ।।

ज्येष्ठतम एवं कनिष्ठतम प्राणी रूप भगवान् रुद्र को नमन; आदिपुरुष रूप एवं उससे उत्पन्न समस्त प्रजा-स्वरूप आपको नमन; सृष्टि के मध्यम भाग रूप (यथा देवता-गण आदि) एवं अबोध शिशु रूप आपको नमन; सृष्टि के अन्तिम रूप (पशु-पक्षी आदि) एवं शाखा-पल्लव युक्त पौधों-वृक्षों रूप आपको नमन; मिश्रित गुणों वाले (अर्थात् सद्गुण-दुर्गुण युक्त मनुष्य जाति) एवं समस्त चर-प्राणी स्वरूप आपको नमन।

नमो याम्याय च क्षेम्याय च नम उर्वर्याय च
खल्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नमो
वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च
प्रतिश्रवाय च ।।

यम के रूप में न्यायप्रदाता एवं मोक्षप्रदाता भगवान् रुद्र को प्रणाम; सर्वधान्यसम्पन्न हरित-धरा के स्वामी एवं कृषि-क्षेत्र में विराजमान आपको प्रणाम; वेद (मन्त्रों) एवं उपनिषदों (उपनिषदों में वर्णित उपासनाओं) में विद्यमान आपको प्रणाम; वनों में वृक्ष-लतारूप आपको प्रणाम; ध्वनि एवं प्रतिध्वनि में विद्यमान आपको बारम्बार प्रणाम।

नम आशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभिन्दते च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमो बिल्मिने च कवचिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च ।।

शीघ्रगामी सेना एवं शीघ्रगामी रथों में विद्यमान भगवान् रुद्र को नमन; परम शूरवीर एवं शत्रुसंहारक आपको नमन; शिरस्त्राण एवं कवच धारण करने वाले आपको नमन; अत्यन्त सुप्रसिद्ध (पुरातन पुरुष) एवं सुप्रसिद्ध सेना युक्त आपको पुनः-पुनः नमन।

नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो दूताय च प्रहिताय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च ।।

दुन्दुभि एवं ढोल की ध्वनि में विद्यमान भगवान् रुद्र को नमन; युद्ध से पलायन न करने वाले योद्धाओं एवं कुशल अन्वेषणकर्ताओं में विराजमान आपको प्रणाम; गुप्तचरों एवं सैन्यदूतों में विराजमान आपको नमन; खड्गधारी एवं तूणीरधारी में विराजमान आपको प्रणाम।

नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च नमः स्तुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च ।।

तीक्ष्ण बाणों एवं असंख्य आयुधों का प्रयोग करने वाले भगवान् रुद्र को प्रणाम, शुभप्रद त्रिशूल एवं मंगलप्रद धनुष (पिनाक) धारी आपको प्रणाम; संकीर्ण वीथियों एवं विस्तृत राजमार्गों में विद्यमान आपको प्रणाम; जलधारा एवं पर्वतीय जल-प्रपातों में विद्यमान आपको प्रणाम।

नमः सूद्याय च सरस्याय च नमो नाद्याय च
वैशन्ताय च नमः कूप्याय चावट्याय च
नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च नमो मेध्याय च
विद्युत्याय च ।।

कच्छभूमि (दलदल) एवं झीलों में विद्यमान भगवान् रुद्र को नमन; नदियों एवं सरोवरों में विद्यमान आपको नमन; कूपों एवं गर्तों में विद्यमान को नमन; वर्षा एवं समुद्रों में विद्यमान आपको नमन; मेघों एवं विद्युत् में विराजमान आपको पुनः-पुनः नमन।

नम ईध्रियाय चातप्याय च नमो वात्याय च
रेष्मियाय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च ।।

शरद्कालीन मेघों एवं उग्रतापकारी सूर्य में विद्यमान भगवान् रुद्र को प्रणाम; वायु एवं प्रलयकारी वर्षा में विद्यमान आपको प्रणाम; भूमि एवं पशु सम्पदा में विराजमान आपको प्रणाम।

नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च
नमः शङ्गाय च पशुपतये च नम उग्राय च
भीमाय च ।।

उमापति एवं (संसार के) समस्त दुःखों के नाशकर्ता भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः नमन, ताम्रवर्णी (उदीयमान सूर्य का रंग) एवं अरुणवर्णी (क्षितिज से ऊपर उठे सूर्य का वर्ण) आपको नमन; समस्त प्राणियों के लिए शान्ति एवं सुखप्रदायक तथा सकल जीवसंरक्षक आपको नमन; उग्र (शत्रुओं के लिए) एवं भयकारक (विरोधियों के लिए) आपको नमन।

नमो अग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च
हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय ।।

अग्रभाग में स्थित होकर शत्रुओं का नाश करने वाले एवं दूर स्थित रहकर शत्रुओं का संहार करने वाले भगवान् रुद्र को प्रणाम; इस जगत् के समस्त वस्तु-

पदार्थों के संहारकर्ता एवं प्रलयकाल में सर्वहन्तारूप आपको प्रणाम; हरितवर्णी पत्रों से युक्त वृक्षरूप आपको प्रणाम; प्रणवस्वरूप भगवान् रुद्र आपको बारम्बार प्रणाम।

नमश्शंभवे च मयोभवे च नमः शंकराय च
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ।।

लौकिक एवं आध्यात्मिक आनन्द के स्रोत भगवान् रुद्र को नमन; पार्थिव एवं स्वर्गिक सुख प्रदाता आपको नमन; कल्याणस्वरूप एवं अन्य सब वस्तुओं से अधिक कल्याणकारी आपको नमन।

नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः पार्याय
चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नम
आतार्याय चालाध्याय च नमः शष्प्याय च
फेन्याय च नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च ।।

तीर्थस्थानों के पावन जल में तथा नदियों के किनारे पर स्थित पवित्र प्रतीकों में विद्यमान भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः प्रणाम; भवसमुद्र के इस तीर (समृद्धिप्रदाता के रूप में) एवं दूसरे तीर (अमृतत्वप्रदाता के रूप में) पर विराजमान आपको प्रणाम; अनुष्ठान एवं ज्ञान द्वारा पापसमूह के नाशकर्ता आपको प्रणाम; कर्मफल-उपभोग एवं पुनर्जन्म के कारणस्वरूप आपको प्रणाम; कोमल तृणों एवं जल की तरंगित फेन में विद्यमान आपको प्रणाम; नदियों की बालुका एवं प्रवाहमान जल में विद्यमान आपको प्रणाम।

नम इरिण्याय च प्रपथ्याय च नमः कि शिलाय च
क्षयणाय च नमः कपर्दिने च पुलस्तये च नमो
गोष्ठ्याय च गृह्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च
नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च नमो हृदय्याय च
निवेष्प्याय च ।।

उर्वरा भूमि एवं विस्तृत राजपथों में विराजमान भगवान रुद्र को नमन; शिलायुक्त भूमि एवं आवासयोग्य भूमि में विराजमान आपको नमन; जटा धारण

करने वाले एवं अपने भक्तों को दर्शन प्रदान करने वाले आपको नमन गोष्ठ्यों (गौशाला) एवं गृहों में विराजमान आपको नमन शय्या में एवं विशाल महलों में विराजमान आपको नमन; कँटीली झाड़ी युक्त वनों एवं पर्वतीय-गुहाओं में विराजमान आपको नमन; जलावर्त (भँवर) एवं तुषारकणों (ओस की बूँदों) में विराजमान आपको बारम्बार नमन।

नमः पाँ सव्याय च रजस्याय च नमः
शुष्क्याय च हरित्याय च नमो लोप्याय
चोलप्याय च नम ऊर्ध्याय च सूर्याय च ।।

प्रत्येक अणु एवं धूलि-कण में विद्यमान भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः प्रणाम; शुष्क एवं हरित काष्ठ में विद्यमान आपको प्रणाम; शुष्क भू-क्षेत्र एवं हरित घास में विद्यमान आपको प्रणामः पृथ्वी एवं प्रबल-उर्मियों से तरंगित नदियों में विद्यमान आपको प्रणाम।

नमः पर्णाय च पर्णशद्याय च
नमोऽपगुरमाणाय चाभिघ्नते च
नम आख्खिदते च प्रख्खिदते च ।।

वृक्ष के हरित पत्रों एवं शुष्क पत्रों में विद्यमान' भगवान् रुद्र को नमन; (दुष्टों पर) प्रहार हेतु उद्यत-आयुध आपको नमन; (शत्रुओं को) मन्द एवं उग्र रूप से उत्पीड़ित करने वाले आपको नमन।

नमो वः किरिकेभ्यो देवाना हृदयेभ्यो
नमो विक्षीणकेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो
नम आनिर्हतेभ्यो नम आमीवत्केभ्यः ।।

देवताओं के हृदयस्वरूप एवं भक्तों के लिए सर्वनिधिप्रदायक (भौतिक एवं आध्यात्मिक) भगवान् रुद्र को प्रणाम; अक्षुण्ण-अविनाशी आपको प्रणाम; सर्वमनोरथ-पूर्णकर्ता आपको प्रणाम; सब ओर से दुष्टों का संहार करने वाले आपको प्रणाम; विपुलतापूर्ण रूपों में स्वयं को अभिव्यक्त करने वाले आपको प्रणाम।

द्रापे अन्धसस्पते दरिद्रन्नीललोहित ।
एषां पुरुषाणामेषां पशूनां मा
भेर्माऽरो मो एषां किं चनाममत् ।।

हे न्यायदण्डधारी! हे अन्न-अधिपति ! हे अनासक्त एवं स्वाधीन ! हे नीललोहित ! (हमारे) इन परिजनों एवं पशुओं में किसी प्रकार का भय न हो। इनमें से किसी का नाश न हो। इनमें से कोई भी रोगग्रस्त न हो।

या ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाह भेषजी ।
शिवा रुद्रस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ।।

हे भगवान् रुद्र! आपका जो शान्त-सौम्य, (ज्ञान एवं मोक्ष प्रदायक) परमकल्याणकारक, समस्त व्याधियों को दूर करने वाला परम-औषधि-रूप मंगलकारी स्वरूप है, उसके द्वारा हमारे जीवन को सुखी बनाइए।

इमाँ रुद्राय तवसे कपर्दिने
क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतिम् ।
यथा नः शमसद्विपदे चतुष्पदे
विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन् अनातुरम् ।।

हम शत्रुसंहारक, जटाधारी भगवान् रुद्र के चरणों में अपने मन-बुद्धि को समर्पित करते हैं ताकि हमारे इस क्षेत्र (ग्राम, भूमि अथवा देश) में मनुष्य एवं पशु प्रसन्न रहें, तथा समस्त प्राणी सभ प्रकार के कष्टों से मुक्त होकर स्वस्थ-प्रसन्न रहें।

मृडा नो रुद्रोत नो मयस्कृधि
क्षयद्वीराय नमसा विधेम ते ।
यच्छं च योश्च मनुरायजे पिता
तदश्याम तव रुद्र प्रणीतौ ।।

हे भगवान् रुद्र! हमें इहलौकिक (भौतिक समृद्धि) एवं पारलौकिक (आध्यात्मिक कल्याण) सुख प्रदान कीजिए। हमारे शत्रुओं (बाह्य एवं आन्तरिक)

के संहारक! हम पुनः-पुनः श्रद्धापूर्वक प्रणाम द्वारा आपको प्रसन्न करना चाहते हैं; आपके प्रेममय अनुग्रह द्वारा हम समस्त दुःखों से मुक्ति तथा सर्व-सुख प्राप्त करें जो हमारे पिता मनु ने प्राप्त किये।

मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं
मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् ।
मा नोऽवधीः पितरं मोत मातरं
प्रिया मा नस्तनुवः रुद्ररीरिषः ।।

हे भगवान् रुद्र! हमारे वृद्धजनों अथवा युवाजनों, हमारे छोटे बालकों अथवा गर्भस्थ शिशुओं का नाश नहीं करिए; हमारे माता अथवा पिता अथवा हमारे प्रियजनों का वध नहीं करिए ।

मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मानो गोषु मा
नो अश्वेषु रीरिषः ।
वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवधीर्हविष्मन्तो
नमसा विधेम ते ।।

हे भगवान् रुद्र ! अपने क्रोधावेश में हमारे पुत्रों, हमारे जीवन, हमारी गायों, हमारे अश्वों को कष्ट मत दीजिए; हमारे वीर (उपयोगी) सेवकों का वध न करिए; हम आहुति-अर्पण एवं बारम्बार नमन द्वारा आपको प्रसन्न करना चाहते हैं।

आरात्ते गोघ्न उत पूरुषघ्ने
क्षयद्वीराय सुम्नमस्मे ते अस्तु ।
रक्षा च नो अधि च देव ब्रूह्यथा
च नः शर्म यच्छद्विबर्हाः ।।

हे प्रभु! हमारे कल्याण हेतु धारण किया गया आपका सौम्य स्वरूप, जो शत्रु-सेना के मनुष्यों एवं पशुओं का नाश करता है; वह शान्त-सौम्य स्वरूप सदैव हमारे समीप रहे, हमारी रक्षा करे, हमारा उत्थान करे, हमें सांसारिक एवं आध्यात्मिक वैभव प्रदान करे।

स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवानं
मृगन्न भीममुपहत्नुमुग्रम् ।
मृडा जरित्रे रुद्र स्तवानो अन्यन्ते
अस्मन्निवपन्तु सेनाः ।।

महायशस्वी, (हृदय) गुहा में वास करने वाले, नित्य युवा (नवीन), (शत्रुओं के एवं प्रलय काल में सृष्टि के) संहार के समय में उग्र सिंह के समान भयंकर रुद्र की सर्वजन स्तुति करें। हे भगवान् रुद्र! इस नश्वर देह के माध्यम से प्रार्थना करने वाले, हम सबको सुखी बनाइए। आपकी सेना उन सबका नाश कर दे जो हमसे भिन्न हैं (अर्थात् हमारे शत्रु हैं)।*

परिणो रुद्रस्य हेतुर्वृणक्तु
परि त्वेषस्य दुर्मतिरघायोः ।
अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व
मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृडय ।।

दुष्टों के विरुद्ध उठाया गया भगवान् रुद्र का विनाशकारी आयुध एवं उनका क्रोध हमसे दूर रहे (हमें हानि न पहुँचाये)। अपने शरणापन्न मनुष्यों को अभीष्ट वर प्रदान करने वाले भगवान् रुद्र! हम प्रणत-जनों पर क्रोधित मत होइए। हमारे पुत्रों-पौत्रों को सुख प्रदान करिए।

मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव ।
परमे वृक्ष आयुधं निधाय कृत्तिं वसान
आचर पिनाकम् बिभ्रदागहि ।।

हे (भक्तों को) इच्छित-वर-प्रदाता ! हे परमकल्याण- स्वरूप प्रभु! हम पर प्रसन्न होइए और अपने अनुग्रह की वृष्टि करिए । अपने संहारक-अस्त्रों को वृक्ष के शिखर पर छोड़कर, हमारे समक्ष व्याघ्रचर्मधारी एवं पिनाकधारी (मात्र अपने प्रतीकस्वरूप धारण किया गया) रूप में प्रकट होइए।

----

* यह स्वयं के बाह्य एवं आन्तरिक शत्रुओं पर विजय हेतु प्रार्थना है। हमारे वास्तविक स्वरूप 'आत्मा' से अन्य जो कुछ भी है, वह हमसे भिन्न ही है।

विकिरिद विलोहित नमस्ते अस्तु भगवः ।
यास्ते सहस्र हेतयोऽन्यमस्मन्निवपन्तु ताः ।।

हे विपुल-वर-प्रदाता! हे श्वेतवर्णी भगवान् रुद्र! हे प्रभु, आपको पुनः-पुनः प्रणाम है। आपके असंख्य आयुध उन सबका नाश करें जो हमसे भिन्न हैं।

ध्यातव्य (Note): यह मन्त्र, स्वयं के वास्तविक स्वरूप 'आत्मा' से विपरीत अन्य तत्त्वों के निराकरण
के लिए है; ये विपरीत तत्त्व हैं-रोग, निर्धनता, अज्ञान और परम सत्ता से पृथकत्व की भावना।

सहस्राणि सहस्रधा बाहुवोस्तव हेतयः ।
तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि ।।

हे प्रभु! आपके हाथों में सहस्रों प्रकार के जो असंख्य आयुध हैं; आप ही उनके स्वामी हैं। उन आयुधों के अग्रभागों को कृपापूर्वक हमसे विपरीत दिशा में कर दीजिए।

सहस्राणि सहस्रशो ये रुद्रा अधि भूम्याम् ।
तेषाँ सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।

पृथ्वी पर भगवान् रुद्र के जो असंख्य रूप निवास करते हैं, उनके असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं।

अस्मिन् महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवा अधि ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

अन्तरिक्ष रूपी इस महान् सागर में वास करने वाले भगवान् रुद्र के विविध रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यश्ञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

ध्यातव्य (Note): कोष्ठक चिह्नों में दिया गया वाक्यांश मूल मन्त्र में नहीं है, इसे केवल नौ अर्द्ध-मन्त्रों के पश्चात् एक ही बार उच्चारित किया जाता है। परन्तु वाक्य एवं भाव को पूर्ण करने के लिए, हम इस वाक्यांश का प्रत्येक अर्द्ध-मन्त्र के बाद प्रयोग करेंगे।

नीलग्रीवाशितिकण्ठाः शर्वा अधःक्षमाचराः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

जिनके कण्ठ का कुछ भाग नील वर्ण का तथा कुछ भाग श्वेत वर्ण का है, जो पाताल लोक में वास करते हैं, भगवान् रुद्र के इन विविध रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

नीलग्रीवाश्शितिकण्ठा दिव रुद्रा उपश्रिताः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

नील-वर्ण कण्ठ एवं श्वेत-वर्ण कण्ठ वाले द्युलोक में (उसके स्वामी रूप में) वास करने वाले भगवान् रुद्र के विभिन्न रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

ये वृक्षेषु सस्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

कोमल बालतृण के समान पीतवर्णी, कभी लोहितवर्णी, नीलग्रीवा, वृक्षों पर (उनके अधिपति रूप में) वास करने वाले भगवान् रुद्र के विभिन्न रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यश्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं।)

ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

जिनमें कुछ मुण्डित केश हैं, कुछ जटाधारी हैं, भूत-पिशाचों के अधिपति रूप भगवान् रुद्र के विभिन्न रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

ये अन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

अन्नभोक्ता प्राणियों को पीड़ित करने वाले (कफ-वात-पित्त धातुवैषम्य द्वारा) तथा पात्रों में पान करने वालों को (विविध व्याधियों द्वारा) पीड़ित करने वाले भगवान् रुद्र के विभिन्न रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

ये पथां पथिरक्षय ऐलबृदा यव्युधः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

समस्त मार्गों (इहलौकिक एवं पारलौकिक) की रक्षा करने वाले, सभी प्राणियों को भोज्य-सामग्री प्रदान करने वाले, शत्रुओं से युद्ध करके उन्हें परास्त करने वाले भगवान् रुद्र के विभिन्न रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकावन्तो निषङ्गिणः ।
(तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।)

तीक्ष्ण खड्ग एवं भयंकर आयुध धारण कर (तीर्थस्थान की रक्षा हेतु) तीर्थों में विचरण करने वाले भगवान् रुद्र के विभिन्न रूपों के (असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं)।

य एतावन्तश्च भूया सश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे ।
तेषा सहस्रयोजनेऽवधन्वानि तन्मसि ।।

भगवान् रुद्र के इन सभी रूपों, तथा दसों दिशाओं में व्याप्त अन्य अनेकानेक रूपों के असंख्य धनुषों को प्रत्यञ्चारहित करके हम सहस्र-योजन दूर रख देते हैं।

नमो रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येऽन्तरिक्षे ये दिवि येषामन्नं
वातो वर्षमिषवस्तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश

प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वास्तेभ्यो नमस्ते नो मृडयन्तु
ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तं वो जम्भे दधामि ।।

हे भगवान् रुद्र! आपके जो विविध रूप पृथ्वी, अन्तरिक्ष एवं द्युलोक में विद्यमान हैं तथा जिनके बाण क्रमशः अन्न, पवन एवं वृष्टिरूप हैं, उन्हें पुनः-पुनः प्रणाम। उनके लिए दसों अँगुलियाँ जोड़कर (हाथ जोड़कर) पूर्व दिशा की ओर प्रणाम, दसों अंगुलियाँ जोड़कर दक्षिण दिशा की ओर प्रणाम, दसों अँगुलियाँ जोड़कर पश्चिम दिशा, दसों अँगुलियाँ जोड़कर उत्तर दिशा तथा दसों अँगुलियाँ जोड़ कर ऊपर की ओर प्रणाम। वे हमें सुखी बनायें। हे रुद्र! हम जिनसे द्वेष करते हैं, तथा जो हमसे द्वेष करते हैं, उन्हें हम आपके विशाल खुले मुखों में डालते हैं।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।।

हम दिव्य गन्ध (ऊर्जा) युक्त, (अपने भक्तों के शक्ति-समृद्धि-वर्द्धक, त्रिनेत्रधारी प्रभु की आराधना करते हैं; हम अमृतत्व प्राप्ति हेतु मृत्यु से उसी प्रकार मुक्त हो जायें जिस प्रकार उर्वारुक (ककड़ी) पक जाने पर अपनी लता से पृथक् अर्थात् मुक्त हो जाता है।

यो रुद्रोऽअग्नौ योऽअप्सु य ओषधीषु यो रुद्रो
विश्वा भुवना विवेश तस्मै रुद्राय नमो अस्तु ।।

उन भगवान् रुद्र को प्रणाम जो अग्नि में हैं, जल में हैं, औषधियों में हैं तथा जो समस्त लोकों में व्याप्त हैं।

तमु टुहि यः स्विषुः सुधन्वा यो
विश्वस्य क्षयति भेषजस्य ।
यक्ष्वामहे सौमनसाय रुद्रं
नमोभिर्देवमसुरं दुवस्य ।।

भगवान् रुद्र की शरण में जाइए जो उत्तम धनुष एवं अत्युत्तम बाणों से सुसज्जित हैं, जो सांसारिक व्याधियों की समस्त औषधियों के स्रोत हैं। हम मन की

शान्ति हेतु, दुःखहन्ता भगवान् रुद्र को पुनः-पुनः प्रणाम कर उनकी आराधना करते हैं।

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः ।
अयं मे विश्वभेषजोऽय शिवाभिमर्शनः ।।

यह मेरा हाथ आशीर्वादित है, यह मेरा हाथ अत्यधिक आशीर्वादित है, यह संसार की समस्त व्याधियों के लिए औषधिस्वरूप है, क्योंकि इसे (पूजा-स्थल में) भगवान् शिव का स्पर्श प्राप्त हुआ है।

ये ते सहस्रमयुतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तवे ।
तान्यज्ञस्य मायया सर्वानव यजामहे ।।

हे हन्ता (मृत्यु की मृत्युस्वरूप) भगवान् रुद्र! मरणशील प्राणी के नाश हेतु आपके जो ये सहस्र, दस-सहस्र पाश हैं, हम यज्ञ (सत्कर्म) की शक्ति द्वारा उन सब पाशों को स्वयं से दूर करते हैं।

मृत्यवे स्वाहा । मृत्यवे स्वाहा
ॐ नमो भगवते रुद्राय विष्णवे मृत्युर्मे पाहि ।।

यह आहुति परम मृत्यु (मृत्यु की मृत्युस्वरूप अथवा समस्त बुराई, पाप एवं दुःखों के नाशकर्ता) को अर्पित हो। यह आहुति परम संहारक को अर्पित हो। सर्वव्यापक भगवान् रुद्र को श्रद्धापूर्वक प्रणाम। आप मेरी मृत्यु (नश्वर जीवन) से रक्षा करिए।

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मा विशान्तकः ।
तेनान्नेनाप्यायस्व ।। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

हे भगवान् रुद्र! आप प्राणों के केन्द्र हैं, अतः आप हममें संहारक के रूप में प्रवेश न करिए। अपने अनुग्रह रूपी अन्न से हमे विपुलता एवं पूर्णता प्रदान करिए। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे
महादेवाय धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।।

हम परम पुरुष से हार्दिक प्रार्थना करते हैं; तथा महादेव का ध्यान करते हैं। भगवान् रुद्र (शिव) हमें (जीवन के मुख्य लक्ष्य की ओर) निर्देशित करें।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

अथ पुरुषसूक्तम्

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यत्तिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।।

जो सहस्र सिरों, सहस्र नेत्रों एवं सहस्र चरणों वाले परम पुरुष हैं, वे सम्पूर्ण पृथ्वी को सब ओर से व्याप्त करके भी इससे दश-अंगुली परे हैं।

ध्यातव्य (Note) - यह वेद के सुप्रसिद्ध 'पुरुष सूक्त' का प्रथम मन्त्र है। इसमें सम्पूर्ण सृष्टि की अनुभवातीत समग्रता की, तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि को अनुप्राणित करने वाली वैश्विक चेतना की 'परम पुरुष' के रूप में अवधारणा की गयी है। इसमें प्रत्युक्त 'भूमि' शब्द से अभिप्राय सम्पूर्ण सृष्टि है। 'दशाङ्गलम्' का अर्थ दश अँगुलियों के बराबर दूरी है जो हृदय एवं नाभि के मध्य की दूरी को इंगित करती है; क्योंकि हृदय को 'आत्मा' का स्थान माना गया है तथा 'नाभि' को समस्त सृष्टि का मूल केन्द्र माना गया है। 'दश' शब्द का अभिप्राय 'अनन्तता' भी हो सकता है क्योंकि अंक 'नौ' तक ही होते हैं तथा जो नौ से परे है, वह गणना से परे है।

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।।
एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्याऽमृतं दिवि ।।

यह समस्त (सृष्टि) परम पुरुष ही हैं; जो अभी है, भूतकाल में था एवं भविष्यकाल में होगा-सब परम पुरुष ही हैं। वे अमृतत्व के स्वामी हैं, क्योंकि वे

पदार्थ (ब्रह्माण्ड) से परे हैं। इस प्रकार की उनकी महिमा है; परन्तु वे अपनी इस भव्य महिमा से भी अधिक महान् हैं। उनका एक पाद (चतुर्थांश) ही यह समस्त ब्रह्माण्ड है; तथा उनके त्रिपाद इससे परे अमृत-तत्त्व रूप में -प्रकाशमान हैं।

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवात्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ।।
तस्माद्विराडजायत विराजो अधिपूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ।।

इस जगत् से परे वह त्रिपाद-विभूति रूप में प्रकाशमान हैं, तथा उनके एक पाद से ही यह ब्रह्माण्ड प्रकट हुआ। फिर वे जड़-चेतन जगत् में परिव्याप्त हुए। उन परम पुरुष से वैश्विक देह (विराट) की उत्पत्ति हुई; और इस विराट् देह में सर्वव्यापी चेतना अभिव्यक्त हुई। इस प्रकार स्वयं को अभिव्यक्त करने के पश्चात्, वे परम पुरुष समस्त सृष्टि, इस पृथ्वी एवं इस शरीर आदि रूप में प्रकट हुए।

यत्पुरुषेण हविषा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ।।
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ।।

जब देवताओं ने एक वैश्विक यज्ञ (गहन ध्यान के रूप में मानस-यज्ञ) किया; उसमें (परम पुरुष के अतिरिक्त अन्य बाह्य सामग्री न होने के कारण) स्वयं परम पुरुष ही पवित्र 'हविष्य' (हव्य-सामग्री) बने; तथा वसन्त ऋतु 'घी', ग्रीष्म ऋतु 'ईंधन' एवं शरद ऋतु 'हवि' के रूप में संकल्पित की गयी। उन आदिपुरुष को ध्यान-यज्ञ का विषय बनाकर देवताओं, साध्यों एवं ऋषियों ने यह (प्रथम यज्ञ) सम्पन्न किया।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम् ।
पशू स्ता श्चक्रे वायव्यानारण्यान् ग्राम्याश्चये ।।
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दा सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।।

उन वैश्विक-यज्ञ रूपी पुरुष से दधि एवं घी का पवित्र मिश्रण (आहुति हेतु) उत्पन्न हुआ। तत्पश्चात् उनसे वायु में उड़ने वाले (पक्षी वर्ग), वन में रहने वाले एवं ग्राम्य में रहने वाले पशु प्रकट हुए। उन वैश्विक यज्ञ-पुरुष से ऋग्वेद एवं सामवेद उत्पन्न हुए; उनसे ही छन्द उत्पन्न हुए; उनसे ही यजुर्वेद प्रकट हुआ।

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्माद् जाता अजावयः ।।
यत्पुरुषं व्यधधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ।।

उन यज्ञ-पुरुष से अश्व उत्पन्न हुए; दो दन्तपंक्तियों वाले पशु उत्पन्न हुए; उनसे ही गौएँ, भेड़-बकरियाँ उत्पन्न हुए। जब देवों ने (वैश्विक-यज्ञ रूप) उन परम पुरुष का ध्यान किया, तब उन्होंने कितने प्रकार से उनके विभाजन की कल्पना की ? उनका मुख किसे कहा गया; उनकी भुजाएँ, जंघाएँ एवं चरण किन्हें कहा गया ?

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत ।।
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ।।

इन परम पुरुष के मुख से ब्राह्मण (आध्यात्मिक ज्ञान एवं दीप्ति) प्रकट हुए, उनकी भुजाओं से क्षत्रिय (प्रशासनिक एवं सैन्य शक्ति), जंघाओं से वैश्य (व्यवसाय-उद्योग क्षमता) तथा उनके चरणों से शूद्र (उत्पादक एवं पोषण शक्ति) प्रकट हुए। उनके (वैश्विक) मन से चन्द्रमा (मन का प्रतीक) उत्पन्न हुए; चक्षुओं से सूर्य (आत्मतत्त्व एवं चेतना का प्रतीक) उत्पन्न हुए। उनके मुख से इन्द्र (ग्रहण शक्ति एवं क्रिया शक्ति) तथा अग्नि (संकल्प शक्ति) प्रकट हुए; उनकी प्राण शक्ति से वायु उत्पन्न हुई।

नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोका अकल्पयन् ।।
सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिःसप्त समिधः कृताः।

देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम् ।।

(उस वैश्विक-ध्यान रूपी यज्ञ में) परम पुरुष की नाभि से अन्तरिक्ष प्रकट हुआ, उनके शिर से द्‌युलोक, उनके चरणों से पृथ्वी तथा उनके कानों से दिशाएँ उत्पन्न हुईं। इस प्रकार उन परम पुरुष में ये सब लोक कल्पित हुए। परम पुरुष को ध्यान-यज्ञ का विषय बनाकर देवताओं (प्राण, इन्द्रिय एवं मन) ने जब वैश्विक यज्ञ किया, तब इस यज्ञ-वेदी की सप्त परिधियाँ (गायत्री आदि सप्त छन्द) थीं तथा त्रिसप्त अर्थात् इक्कीस समिधाएँ (बारह मास, पाँच ऋतुएँ, तीन लोक एवं सूर्य) थीं।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाःतानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्ते
यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।

(वैश्विक ध्यान रूपी) यज्ञ द्वारा देवताओं ने (परम-पुरुष रूपी) यज्ञ का पूजन-यजन किया। ये (देव) ही प्रथम सृष्टि थे एवं (सृष्टि का पालन करने वाले) प्रथम धर्म थे। महापुरुषजन (इस प्रकार के ध्यान द्वारा परम पुरुष की आराधना करने वाले) उस परम धाम को प्राप्त करते हैं जहाँ वे प्रथम ध्याता (देव-गण, साध्यगण) रहते हैं जिन्होंने परम-पुरुष की इस प्रकार प्रथम आराधना की थी।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था
विद्यतेऽयनाय ।।

मैं अन्धकार से परे, सूर्य के समान दीप्तिमन्त इस परम पुरुष को जानता हूँ। केवल इन पुरुष को जानने से ही, मनुष्य मृत्यु के परे चला जाता है; इसके अतिरिक्त मृत्यु के परे जाने का कोई अन्य मार्ग नहीं है।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

अथ नारायणसूक्तम्

ॐ सहस्रशीर्ष देवं विश्वाक्षं विश्वशम्भुवम् ।
विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम् ।।

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड स्वयं श्री नारायण ही है जो सहस्र सिरों एवं सहस्र नेत्रों वाले (सर्वव्यापक एवं सर्वज्ञ) हैं, अविनाशी, परम प्रकाशवान तथा समस्त विश्व को आनन्द प्रदान करने वाले हैं।

ध्यातव्य (Note) - इस श्लोक के साथ वैदिक मन्त्रों की यह सुप्रसिद्ध स्तुति आरम्भ होती है जो परम पुरुष के इस सृष्टि के रूप में अभिव्यक्त होने का वर्णन करती है।

विश्वतः परमं नित्यं विश्वं नारायण हरिम् ।
पुरुषस्तद्विश्वमुपजीवति ।।
विश्वमेवेदं

यह ब्रह्माण्ड स्वयं परम पुरुष ही है; अतः यह उन पर ही आश्रित है; वह शाश्वत तत्त्व इस ब्रह्माण्ड से (सब प्रकार से) परे है, वह सर्वव्यापक परम तत्त्व सबके पापों का नाशकर्ता है।

पतिं विश्वस्यात्मेश्वर शाश्वत शिवमच्युतम् ।
नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम् ।।

वह श्री नारायण सम्पूर्ण सृष्टि के रक्षक, समस्त जीवों के स्वामी, शाश्वत, परम पावन, अविनाशी, समस्त सृष्टि के लक्ष्य, ज्ञेय वस्तुओं में सर्वाधिक महान्, समस्त प्राणियों के आत्मा एवं परम आश्रय हैं।

नारायणः परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः ।
नारायणः परो ज्योतिरात्मा नारायणः परः ।।
नारायणः परो ध्याता ध्यानं नारायणः परः ।।

भगवान् श्री नारायण परम ब्रह्म हैं, भगवान् श्री नारायण परम तत्त्व हैं; भगवान् श्री नारायण परम ज्योति हैं; भगवान् श्री नारायण परम आत्मा हैं; भगवान् श्री नारायण परम ध्याता हैं; भगवान् श्री नारायण ही परम ध्यान हैं।

यच्च किंचिज्जगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा ।
अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः ।।

इस जगत् में जो कुछ भी दिखायी देता है तथा सुनायी देता है, उस सबको भीतर एवं बाहर से परिव्याप्त करके शाश्वत दिव्य सत्ता 'भगवान् श्री नारायण' स्थित हैं।

अनन्तमव्ययं कवि समुद्रेऽन्तं विश्वशम्भुवम् ।
पद्मकोशप्रतीकाशं हृदयं चाप्यधोमुखम् ।।

वे अनन्त, अविनाशी, सर्वज्ञ, हृदय-समुद्र में वास करने वाले, समस्त विश्व को आनन्द प्रदान करने वाले तथा समस्त प्राणियों के परम लक्ष्य हैं; वे स्वयं को उस हृदयाकाश में अभिव्यक्त करते हैं जिसकी तुलना कमल-पुष्प की एक अधोमुखी कलिका से की जाती है।

अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुपरि तिष्ठति ।
ज्वालामालाकुलं भाति विश्वस्यायतनं महत् ।।

कण्ठ से एक बालिश्त (लगभग ९ इंच) नीचे नाभि से ऊपर स्थान (अर्थात् हृदय में जो मनुष्यों में शुद्ध चेतना के प्रकटीकरण का स्थान है) में अग्निज्वालाओं की मालाओं से सुशोभित, अत्यन्त प्रकाशमय, वह विश्व का महान् अधिष्ठान विभासित होता है।

सन्तत शिलाभिस्तु लम्बत्याकोशसंनिभम् ।
तस्यान्ते सुषिर् सूक्ष्मं तस्मिन् सर्वं प्रतिष्ठितम् ।।

सब ओर से नाड़ियों से घिरी, हृदय रूपी कमल-कलिका अधोमुखी स्थिति में रहती है। उसमें एक सूक्ष्म प्रकोष्ठ अथवा छिद्र (सुषुम्ना नाड़ी) होता है; वहीं वह सर्व-अधिष्ठान प्रतिष्ठित है। तस्य मध्ये

महानग्निर्विश्वर्चिर्विश्वतोमुखः ।
सोऽग्रभुग् विभजन् तिष्ठन् आहारमजरः कविः ।।

हृदय के उस सूक्ष्म प्रकोष्ठ में वह महाग्नि स्थित है, जो अजर है, सर्वज्ञ है, जिसकी जिह्वाएँ एवं मुख सभी दिशाओं में व्याप्त हैं; जो अपने सम्मुख रखे आहार को ग्रहण करती है और स्वयं में आत्मसात् करती है।

तिर्यगूर्ध्वमधःशायी रश्मयस्तस्य सन्तताः ।
संतापयति स्वं देहमापाततलमस्तकम् ।
तस्य मध्ये वह्निशिखा अणीयोर्ध्वा व्यवस्थितः ।।

उसकी रश्मियाँ ऊपर, नीचे, दायें एवं बायें सर्वत्र व्याप्त हैं, जो सिर से पैर तक सम्पूर्ण शरीर को उष्ण करती हैं। उस (अग्नि) के मध्य में सूक्ष्मतम अग्निशिखा (वह्निशिखा) स्थित है।

ध्यातव्य (Note): सांसारिक सुख-दुःख से बँधे होने के कारण चेतना सांसारिकता के आवरण से ढकी रहती है,

> अतः अज्ञान के घने बादलों के मध्य यह चेतना सूक्ष्म अग्नि-शिखा के समान प्रतीत होती है। परन्तु जब जीवात्मा सांसारिकता के तल से ऊपर उठती है, तब उसे चेतना की अनन्तता का साक्षात्कार होता है।

नीलतोयदमध्यस्थाद् विद्युल्लेखेव भास्वरा ।
नीवारशूकवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपमा ।।

जल से भरे श्यामवर्णी मेघों के मध्य विद्युत्-लेखा के समान दीप्तिमन्त, नीवार-शूक (धान की बाली का अग्र भाग) के समान तन्वी अर्थात् बहुत पतली,

स्वर्ण के समान पीतवर्णी, परमाणु-सम सूक्ष्म यह (वह्निशिखा) प्रखरता से चमकती है।

तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः ।
स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः
परमः स्वराट् ।।

इस अग्निशिखा के मध्य परमात्मा निवास करते हैं। वह परमात्मा ही ब्रह्मा (सृष्टिकर्ता), शिव (संहारकर्ता), हरि (पालनकर्ता), इन्द्र (शासनकर्ता) हैं; वह अविनाशी, परम स्वतन्त्र सत्ता हैं।

ऋत सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिंगलम् ।
ऊध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः ।।

उन सर्वस्वरूप परमात्मा को पुनः-पुनः प्रणाम जो परम सत्य हैं, परम ब्रह्म हैं, परम तत्त्व हैं, कृष्णपीतवर्ण पुरुष हैं, केन्द्रीभूत शक्ति अर्थात् सर्वशक्तिमान् एवं सर्वद्रष्टा हैं।

ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ।
तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ।।

हम भगवान् श्री नारायण से हार्दिक प्रार्थना करते हैं, तथा भगवान् वासुदेव का ध्यान करते हैं; वे महाविष्णु हमें (जीवन के परम लक्ष्य की ओर) निर्देशित करें।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

अथ श्रीसूक्तम्

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।।
तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ।।

हे अग्निदेव! आप स्वर्ण के समान दीप्तिमन्त, पीतवर्णी, स्वर्ण एवं रजत के हार पहनने वाली, चन्द्रमा के समान शुभ्रकान्ति युक्त, धन-वैभव की साकार विग्रह 'देवी लक्ष्मी' का मेरे लिए आह्वान करें। हे अग्निदेव ! उन देवी लक्ष्मी का मेरे लिए आह्वान करें जो अपलायनशीला (स्थिर) हैं तथा जिनके आशीर्वाद से मैं स्वर्ण, गौ, अश्व तथा पुत्रादि प्राप्त करूँगा।

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवीर्जुषताम् ।।
कां सोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां
तर्पयन्तीम् ।
पद्म स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।

मैं उन श्री (देवी लक्ष्मी) का आह्वान करता हूँ जिनके आगे अश्वों की पंक्ति है, मध्य में रथ है, जो हाथियों के उच्च स्वरों से प्रबोधित (जगायी जाती) की जाती हैं तथा जो दिव्य तेजोमयी हैं। वे देवी मुझ पर कृपा करें। मैं यहाँ उन श्री (देवी लक्ष्मी) का आह्वान करता हूँ जो परमानन्द का मूर्तिमन्त स्वरूप हैं, जिनके मुख पर मनोहारी मुस्कान है, जिनकी स्वर्ण के समान उज्ज्वल कान्ति है, जो आर्द्रा हैं (मानो अभी क्षीर सागर से निकली हों), जो अत्यन्त दीप्तिमती हैं, तृप्ति स्वरूप हैं, जो अपने भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण करती हैं, जो पद्म-पुष्प पर विराजमान हैं तथा पद्म-पुष्प के समान अत्यन्त सुन्दर हैं।

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं
श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्ये
अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।।
आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो
वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु
मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ।।

मैं उन देवी लक्ष्मी की शरण ग्रहण करता हूँ जो चन्द्रमा के समान सौन्दर्ययुक्त हैं, अत्यन्त तेजोमयी हैं, सुयश के प्रकाश से दीप्तिमती हैं, देवगणों द्वारा पूजिता हैं, अत्यन्त उदारहृदया हैं तथा कमल के पुष्प समान मनोहर हैं। उनकी कृपा से मेरे दुर्भाग्य का नाश हो। हे देवी! मैं स्वयं को आपके पावन चरणों में समर्पित करता हूँ। हे सूर्य के समान देदीप्यमान! आपकी शक्ति से ही बिल्ववृक्ष (के समान), अन्य वनस्पति-पौधे आदि उत्पन्न हुए हैं। उनके फल आपके अनुग्रह से हमारे बाह्य एवं भीतर की समस्त अशुभता एवं अज्ञान को दूर करें।

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ।।
क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णद मे गृहात् ।।

हे देवी लक्ष्मी! मैं इस धन-सम्पदा युक्त राष्ट्र में उत्पन्न हुआ हूँ। भगवान् शिव के सखा (कुबेर) एवं कीर्ति मुझे प्राप्त हों। ये दोनों (मेरे साथ रहकर) मुझे यश एवं समृद्धि प्रदान करें। मैं देवी लक्ष्मी की बड़ी बहन 'अलक्ष्मी' का नाश चाहता हूँ जो क्षुधा, पिपासा तथा सब प्रकार की अशुभता-दरिद्रता की प्रतीक हैं। हे देवी लक्ष्मी ! आप मेरे गृह से समस्त प्रकार के दारिद्र्य एवं अमंगल को दूर करें।

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।।
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ।।

मैं देवी लक्ष्मी का आह्वान करता हूँ जो गन्धद्वारा हैं अर्थात् जिन्हें जानने का माध्यम सुगन्ध है (जो मुख्यतया गौओं में निवास करती हैं), जो अपराजिता हैं, जो नित्यपुष्टा हैं (सत्य आदि सद्गुणों से सम्पन्न), जिनकी विपुल कृपा गोमय में दृष्टिगोचर होती है (गौ सर्वाधिक पवित्र प्राणी होने के कारण) तथा जो समस्त प्राणियों की स्वामिनी हैं। हे देवी! हमारी सभी इच्छाएँ एवं कामनाएँ परिपूर्ण हों, हमारी वाणी को सत्यता प्राप्त हो, हमें पशु-सम्पदा एवं अन्नादि भोज्य-पदार्थ प्रचुर रूप में प्राप्त हों। मुझे (आपके भक्त को) यश एवं समृद्धि प्राप्त हो।

कर्दमेन प्रजा भूता मयि संभव कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ।।
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
निच देवीं मातर श्रियं वासय मे कुले ।।

हे देवी लक्ष्मी! कर्दम आपकी सन्तान हैं। अतः हे कर्दम, आप मुझमें निवास करें। आप पद्मपुष्पों की माला धारण करने वाली माता लक्ष्मी को हमारे कुल में स्थापित करें। पवित्र जल मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों का सृजन करे। हे चिक्लीत (श्री की सन्तान) । आप मेरे गृह में वास करें तथा माता लक्ष्मी (श्री) को मेरे कुल में वास करायें।

आर्द्रा पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।
सूर्या हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।।
आर्दा यः करिणीं यष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।।

हे अग्निदेव! आप मेरे लिए उन देवी लक्ष्मी का आह्वान करें जो स्वर्ण के समान उज्ज्वल कान्ति से युक्त हैं, सूर्य के समान दीप्तिमन्त हैं, दिव्य सुगन्धि सम्पन्न हैं, सर्वोच्च शक्तिस्वरूपा हैं, विविध आभूषणों से शोभित हैं तथा धन-सम्पदा की

देवी हैं। हे अग्निदेव! आप मेरे लिए उन देवी लक्ष्मी का आह्वान करें जो स्वर्ण के समान उज्ज्वल कान्ति से युक्त हैं, चन्द्रमा के समान प्रफुल्लवदना हैं, सुगन्धित द्रव्यों से अभिषिक्त हैं, (स्वर्गिक गजों द्वारा अर्पित) कमल-पुष्पों से विभूषित हैं, पुष्टि-समृद्धि की अधिष्ठात्री देवी हैं, पीतवर्णी हैं तथा जो पद्मपुष्पों की माला धारण करती हैं।

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं
पुरुषानहम् ।।

हे अग्निदेव! आप मेरे लिए उन लक्ष्मी देवी का आह्वान करें जो अपलायनशीला (स्थिर) हैं तथा जिनके आशीर्वाद से मैं प्रचुर धन-सम्पदा, पशु, सेवक एवं अश्व प्राप्त करूँगा।

ॐ महादेव्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ।।

हम महादेवी से हार्दिक प्रार्थना करते हैं, तथा भगवान् विष्णु की पत्नी का ध्यान करते हैं। वे देवी लक्ष्मी हमें (जीवन के परम लक्ष्य की ओर) निर्देशित करें।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।